सती-शिरोमणि

चन्दनबाला

प्रकाशक

श्रीपूज्य जैनाचार्य श्रीचन्द्रसिंहसूरिश्वर शिष्य

पण्डित काशीनाथ जैन.

कलकत्ता

२०१ हरिसन रोडके "नरसिंह प्रेस"में

मैनेजर पं० काशीनाथ जैन,

द्वारा मुद्रित।

प्रथमवार २०००]

[मूल्य ॥=)

पाठकों के समक्ष,हम अपनी इस पहली पुस्तिका को उपस्थित करते हैं। अगर पाठकों ने इसे पसन्द किया तो इसी तरह के उपदेशप्रद महासतिओंके चरित्र और महापुरुषों एवं परम पूजनीय तीर्थंकरों के चरित्र भी भेंट किये जायेंगे। ये चरित्र इसी उद्देश्य सें प्रकाशित किये जायेंगे, कि इनके पढ़ने से पाठकों को धार्मिक तथा नैतिक शिक्षाएँ प्राप्त हों और लोगों में धर्म,-नीति और ज्ञान का प्रसार हो।

जैन समाज में आज ऐसा कोई जैनी न होगा, जो सती-शिरोमणी चन्दनबाला को न जानता हो। उसी पुण्यशीला प्रातः स्मरणीया सती का चरित्र इसमें वर्णित है। इसकी कथा रोचक और हृदयग्राही होने के कारण, इसे नवीन औपन्यासिक शैली के अनुसार लिखा गया है।

अपनी समाज में हिन्दी जैन-साहित्य के प्रचार की पूर्ण आवश्यकता है। इसी अभाव ने आज अपनी समाज में घोर अन्धकार का साम्राज्य फैला दिया है। आज तक किसी महानुभाव ने इस

ओर लक्ष नहीं दिया, अगर हिन्दी-साहित्य के प्रचार की ओर पूर्ण रूप से ध्यान दिया जाय, तो निस्सन्देह समाज को अपूर्व लाभ हो सकता है। आशा है, पाठकगण इस ओर लक्ष प्रदान करेंगे।

पाठकोंके पठनार्थ हमने पन्द्रह पुस्तकें तैयार की हैं, जिनमें से आदिनाथ-चरित्र, शान्तिनाथ-चरित्र, नल दमयन्ती, सुदर्शन सेठ और कयवन्ना सेठ, ये पुस्तकें छपकर तैयार हैं। केवल चित्रों के तैयार न होनेके कारण ही रुकी हुई हैं, आशा है, दो मासके भीतर क्रमश सभी पुस्तकें पाठकों की सेवा में उपस्थित की जायेंगी।

शेषमें हम अपने परम माननीय श्रद्धास्पद बाबू अमीचन्दजी गोलेछा व छोटमलजी जतनलालजी तथा वयोवृद्ध धर्मप्रेमी जमनालालजी कोठारी को सहर्ष धन्यवाद देते हैं, कि जिन्होंने इस कार्यके सम्पादनमें प्रोत्साहन प्रदान कर हमें उपकृत किया है।

इस पुस्तक में कहीं किसी स्थान पर दृष्टिदोष से अशुद्धि रह गई हो तो पाठकगण क्षमा करें। अस्तु

ता० १५-१०-१९२३
नरसिंह प्रेस,
कलकत्ता।

भवदीय
काशीनाथ जैन।

सती-शिरोमणि-

चन्दनबाला

पहला परिच्छेद

सतीत्वके लिये प्राण-त्याग करना।

अत्यन्त प्राचीन समयमें, चम्पानगरीमें दधिवाहन नामके एक राजा रहते थे। वे जातिके क्षत्रिय थे। उनके न्याय और प्रजापालनकी सर्वत्र बड़ी प्रशंसा थी। उनकी रानीका नाम धारिणी था, जिन्हें रानी पद्मावती भी कहा करते थे। वे राजा चेटककी पुत्री और बड़ी ही गुणवती थीं। उनके चन्दनबाला नामकी एक पुत्री थी, जिसका दूसरा नाम वसुमती था। चन्दनबाला बड़ी ही सद्गुणवती, चतुरा, बुद्धिमती और रूपवती थी। रानी धारिणीके समस्त उत्तम गुण और अच्छे संस्कार राजकुमारी चन्दनबालामें चले आये थे।

प्राचीन समयमें इस देशके स्त्री-समाजकी वैसी दुर्दशा नहीं थी, जैसी आजकल दिखाई देती है। लड़कियोंकी शिक्षाकी ओर भी वैसा ही ध्यान दिया जाता था, जैसा लड़कोंकी शिक्षा-की ओर। वास्तवमें स्त्री और पुरुष, दोनोंको मिलाकर ही मनुष्य-समाजकी सृष्टि हुई है। जैसे पुरुषोंमें सद्गुण स्वभावसे ही छिपे रहते हैं, वैसे ही स्त्रियोंमें भी। विकासका अवसर और साधन प्राप्त होने से स्त्रियोंके गुण भी पुरुषोंकी ही भाँति प्रकट हो सकते हैं, इसलिये लड़कियोंको भी उचित शिक्षा देकर उनके गुणोंको विकासका अवसर देना चाहिये। प्राचीनकाल में प्रत्येक माता-पिता अपनी कन्याओंको पढ़ाते-लिखाते और उन्हे आदर्श गृहिणी, आदर्श सहधर्मिणी, आदर्श माता बनानेकी चेष्टा किया करते थे। विना स्त्रियोंकी उन्नतिके कोई समाज उन्नत नहीं हो सकता।

राजा दधिवाहनने भी अपनी पुत्री वसुमतीको बड़ी अच्छी धार्मिक और नैतिक शिक्षा दिलायी थी। इसीसे वह व्यवहारके साथ-ही साथ जैन-धर्मके सूक्ष्म तत्वोंको भी भलीभाँति जान गयी थी। इतना ही नहीं, वह धर्मका आचरण भी बड़ी निष्ठाके साथ करती थी। उसे देख कर लोग कहा करते थे, कि रानी धारिणीके सभी उत्तम गुण वसुमतीको विरासतमें मिल गये हैं। वसुमती जैसी गुणवती थी, वैसी ही रूपवती भी थी। बिना किसी प्रकारका शृङ्गार किये ही उसकी सुन्दरताकी आभा

निकलती रहती थी। इसके सिवा उसकी उदारताकी भी चारों ओर प्रशंसा थी। चारों ओर उसकी उदारताकी चर्चा थी।

एक समयकी बात है, कि कौशाम्बी नगरीके राजा शतानीकके साथ राजा दधिवाहनका वैर हो गया। बलवान् राजा शतानीक गुप्त रीतिसे अपनी सेना लिये हुए चम्पानगरी पर चढ़ आये और उसे चारों ओरसे घेर लिया। यह बात जब राजा दधिवाहनको मालूम हुई, तब उन्होंने भी अपनी सेना तैयार की और लड़ाईके लिये प्रस्तुत हो गये। दोनों सेनाएँ आमने-सामने डट गयीं। महा भयङ्कर युद्ध ठन गया। लाखों मनुष्योंके सिर कट गये। लाखों घायल हुए। रक्तकी नदी बह चली। बडी घनघोर लड़ाईके बाद राजा दधिवाहन हार गये—उनकी सारी सेना तितर-बितर हो गयी। वे प्राण लेकर भाग चले। उनके भागतेही राजा शतानीक चम्पापुरीमें चले आये और वहाँ लूट-पाट मचाने लगे। कई दिनों तक लूट-तराज़का बाजार गरम रहा। राजा शतानीककी आज्ञा और शासनका चम्पापुरीमें प्रवर्त्तन हो गया। इस तरह वहाँ अपनी हुकूमतका सिक्का बैठाकर राजा शतानीक फिर कौशाम्बी-नगरीको चले गये।

उसी लूट-पाट और मार-काटके जमानेमें राजा शतानीकका एक लम्पट और प्रचण्ड वीर सेनापति रानी धारिणी और राज-कुमरी वसुमतीको पकड़ कर एक ओर ले भागा। जाते-जाते वह एक जंगलमें पहुँच गया। वहाँ पहुँच कर उसने रानी धारिणी-से कहा,—"सुन्दरी! तुम मेरी प्राणप्यारी बन जाओ। हाथमें

आये हुए अवसरको जो खो देता है, उसको पीछे पछताना ही हाथ आता है—उसका सारा स्वार्थ नष्ट हो जाता है। मैं तुम्हे अपने प्राणोंसे भी बढ़कर मानूँगा। इसलिये यह अवसर तुम हाथसे न निकलने दो और सुखका समय व्यर्थ दुःख-भोग करनेमें न गवाओ।"

रानी धारिणी क्षत्रियकी बेटी, राजाकी पत्नी और आदर्श पतिव्रता थी। वह सतीत्वकी महिमा भलीभांति जानती थी और अपनी पवित्रताको प्राणोंसे भी बढ़कर मानती थी। उसकी नसोंमें क्षत्रियोंका रक्त बड़े वेगसे प्रवाहित हो रहा था। धार्मिक-शिक्षा उसकी रग-रगमें प्रवेश कर चुकी थी। उसका हृदय धर्मके विचारोंसे बड़ा ही उन्नत हो रहा था। अतएव उसके चित्तमें किसी तरहका कुविचार या कुसंस्कार प्रवेश नहीं कर सकता था। वह आर्हत-धर्मका महात्म्य अच्छी तरह जानती थी, इसलिये जान जाने पर भी अपने धर्म और सतीत्वकी रक्षा करनेके लिये तैयार रहती थी। धार्मिक वीरता उसके रोम-रोममें कूट-कूट कर भरी हुई थी। इसलिये वह उस सेनापतिकी ऊपर लिखी अनुचित बातें सुनते ही क्रोधसे तमतमा उठी और कांपते कण्ठसे बोली,—

"रे नराधम! यह तू कैसी बातें बक रहा है? ज़रा अपना मुँह तो आइनेमें देख आ, फिर मुझसे इस तरहकी बातें करना। जो मनुष्य अपने पवित्र धर्मका परित्याग कर देता है, वह मनुष्य नहीं—पशुसे भी हीन है। वह अवश्य ही नरकका अधिकारी होता

है। जो अपने घरकी स्त्रीको छोड़कर परायी नारी पर मन ललचाता है, वह मानों बढ़िया-बढ़िया अन्न-व्यञ्जनोंसे भरी हुई थाली छोड़ कर जूँठी पत्तल चाटना चाहता है। वह कुत्ते के ही बराबर है। तेरे पुरुषार्थको धिक्कार है, जो तू मुझ निर्बल, निस्सहाय और निराधार अबला पर अत्याचार करनेको तैयार है। रे नरपशु! तेरी इस वीरतासे तो पवित्रताके पथ पर चलनेवाले मनुष्यकी निर्बलता हजार दर्जे अच्छी है। परायी नारी पर मन ललचानेवाले रावणकी क्या दुर्दशा हुई, इसका विचार कर। द्रौपदीका अपमान करनेवाले दुःशासन और दुर्योधनका क्या हाल हुआ, यह सोचो। इस तरहके सैकडों उदाहरण संसारमें मौजूद हैं।

इस प्रकार बार-बार समझाने, डाँटने-फटकारने और धिक्कार देने पर भी वह लम्पट अपने इरादेसे नहीं हटा और रानी धारिणी पर बलात्कार करनेको तैयार हुआ।

शील और सतीत्व ही स्त्रियोंका भूषण है। इसके बल पर वे स्वर्गके देवताओंको भी पृथ्वी पर उतार ला सकती हैं। इसी कारण वे शीलको अपने प्राणोंसे भी बढ़कर मानती हैं और प्राण गँवाकर भी इसे नहीं गँवाना चाहतीं। धारिणी भी अपने धर्ममें अटल थी और उसकी रक्षाके आगे जीवनको भी तुच्छ समझती थी। इसीलिये उसने जब देखा, कि अब यह कामान्ध सेनापति बलात्कार किये बिना नहीं मानेगा, तब अपनी जान देनेको तैयार हो गयी और उस दुष्टके अपने शरीर पर हाथ डालने-

के पहले ही आत्महत्या करके इस लोकसे विदा हो गयी। उस-का जीव पति-परमेश्वरका ध्यान करता हुआ परलोक चला गया।

धन्य आर्य रमणी! तुम्हें कोटि वार धन्यवाद है। तुम्हारी ही पवित्रतासे आज तक इस आर्य भूमिकी पवित्रता वनी हुई है।

दुसरा परिच्छेद।

सती वसुमतीका बाजारमें बेचा जाना।

समय कभी किसीका एकसा नहीं रहता। जो आज राजा है, लाखों-करोड़ों प्रजाजनोंके हर्त्ता-कर्त्ता और विधाता है, वही काल-क्रमसे कल गली-गली भीख माँगता फिरता है और आज जिसे पाव-भर अन्न और गज भर वस्त्रका भी ठिकाना नहीं है, वही कल राजाधिराज हो जाता है। यही हाल राज-कुमारी वसुमतीका भी हुआ। बेचारी कल गद्दी-तकिये पर लेटनी और उत्तमोत्तम पदार्थोंका भोजन करती हुई सारे संसार के ऐश्वर्य भोग रही थी; परन्तु आज बेचारीको कहीं ठिकाना नहीं है। राजाधिराज-नन्दिनी इस समय एक बारगी निरव-लम्ब अवस्थामें पड़ी हुई है। राजमहलसे बाहर होने पर उसे एक मात्र यही भरोसा रह गया था, कि वह अपनी माताके साथ

है ; परन्तु आज एकाएक उसका यह अवलम्ब भी टूट गया। कामान्ध और क्रूर सेनापतिके अत्याचारसे पीड़ित होकर उसकी माताने जब प्राणत्याग कर दिया, तब उसे इतना असहनीय शोक हुआ, कि वह मूच्छित होकर गिर पड़ी। उस समय उसकी दशा देखकर यमराजको भी दया आ जाती थी। वह शोकमय दृश्य देखकर आँखोंसे बरबस आँसू निकल पड़ते थे।

थोड़ी देर बाद राजकुमारीकी मूर्च्छा टूटी और जंगलकी ठंढी-ठढी हवा लगनेसे उसे चैतन्य हो आया। तब उसने अपनी माताकी लाश अपनी गोदमें लेकर इस प्रकार विलाप करना शुरू किया :—

"हाय, मेरी अम्मा! तू मुझे इस पापी व्याधके समान निर्दय सेनापतिके हाथमें अकेली छोड़ कर कहाँ चली गयी? क्या इस प्रकार मुझे संसार समुद्रमें अकेली बहती हुई छोड़ जाते तुझे दया नहीं आयी? प्यारी माँ! तेरे बिना मेरा जीना अब कैसे होगा? मुझे दुःखकी नदीमें छोड़कर तू किस कलेजेसे चली गयी? हाय! तू मुझे किस तरह अपने प्राणोंसे बढ़कर प्यार करती थी! आज तेरा वह प्यार क्या हो गया? तो क्या आज मुझे इस अत्याचारीका शिकार होना ही पड़ेगा? माँ! तुझे खोकर अब मैं जी कर ही क्या करूँगी? जैसी माँ होती है, वैसी ही पुत्री भी। इसलिये तुझसी शीलवती माताकी सन्तान होकर मुझे भी तेरी ही तरह प्राण दे देना पड़ेगा। तेरे पीछे-पीछे जानेको मेरे प्राण व्याकुल हो रहे हैं।" यह कह, वसुमती अपनी माताके पैरों पर गिर कर फिर कहने लगी,—"मायामयी जननी! यदि तुझे जाना

"हाय, मेरी अम्मा! तू मुझे इस पापी व्याधके समान निर्दय सेनापतिके हाथमें अकेली छोड़कर कहाँ चली गयी? क्या इस प्रकार मुझे संसार समुद्रमे अकेली बहती हुई छोड जाते तुझे दया नहीं आयी? प्यारी मा! तेरे विना मेरा जीना अब कैसे होगा?

Narsingh Press Calcutta

[पृष्ठ ८]

ही है, तो मुझे भी अपने साथ लेती चल। तेरे बिना मैं क्षण भर भी अकेली नहीं रह सकती।"

वसुमतीका ऐसा रोना-कलपना सुनकर उस कामी और क्रूर सेनापतिको भी दया आ गयी। उसने सोचा,—"मैं नीच प्रस्ताव कर, एकके तो प्राण ले ही चुका, अबके कहीं इसने भी जान दे दी, तो मुझे दो-दो स्त्रियोंकी हत्या करनेका पाप लगेगा।" यही सोच कर उसने वसुमती को धैर्य देते हुए कहा,—"हे राजकुमारी। जो होनहार होती है, वह तो होकर ही रहती है। उसे कोई इधरसे उधर नहीं कर सकता। भावीके वशमें राजा और रङ्क, दोनों ही हैं। दैवका कोप किसीका पक्षपात करना नहीं जानता। इसलिये हे राजनन्दिनी! जो होना था, वह तो हो ही चुका; अब तुम अपने मनमें मेरी ओरसे कुछ भी भय न आने दो। मैं तुम्हारा रत्ती भर भी नुक़सान नहीं कर सकता। मुझे अपनी पिछली करनी पर आपही पछतावा हो रहा है। अब मैं तुम्हें अपनी बहन-बेटीके समान समझता हूँ। अतएव तुम अपने मनसे सारी शङ्काएँ दूर कर दो।"

उसकी ऐसी बातें सुन, वसुमती को बडा धैर्य हुआ। इसके बाद धारिणीके शरीरसे सारे अलङ्कार उतार कर, लाशको ठिकाने लगा, वह वीर सेनापति र ाजकुमारी वसुमतीको लिये हुए अपने घर आया। उसका वह अलौकिक रूप और भरी हुई जवानी देख, उसकी स्त्रीके मनमें बड़ी शङ्का हुई। उसने सोचा,— "ऐसी सुन्दर-सलोनी स्त्रीको मेरे स्वामी किस लिये घर

लाये हैं ? कहीं इसे अपनी स्त्री बनानेके लिये तो नहीं लाये ? यदि कहीं ऐसा हुआ, तो फिर इस घरमें मेरा कौनसा आदर-मान रह जायेगा ? इसलिये अच्छा हो यदि पहले ही डाँट-फटकार बतला कर इस बलाको सिरसे टाल दूँ ।"

ऐसा विचार कर, उसने क्रोधित मूर्त्ति बनाये, अपने स्वामीके पास आकर कहा,—"यह स्त्री कौन है ? इसे तुम यहाँ किस लिये ले आये हो ? परायी स्त्रीको अपने घरमें रखनेका क्या काम है ? कहीं इसके साथ तुम्हारी लगन तो नहीं लगी है ? यदि यह बात हो, तो ठीक समझ रखना, राजाको इस बातकी ख़बर होते ही तुम्हारी पूरी कम्बख़्ती आ जायेगी। इसलिये जहाँतक जल्दी बन पड़े, इसे घरसे बाहर निकाल डालो। इसे देख-देख कर मेरे मनमें तरह-तरहकी शङ्काएँ हो रही हैं। चाहे जो कुछ हो तुम इसे अभी घरसे निकाल दो। यदि ऐसा न करोगे, तो मैं स्वयं राजाको इसकी ख़बर दिलवा दूँगी, जिसका नतीजा तुम्हारे लिये बहुत बुरा होगा।"

अपनी स्त्रीकी ऐसी बातें सुन, उसके पेट में चूहे कूदने लगे—घबराहटके मारे उसकी जान धपलेमें पड गयी। उसने सोचा,—"यदि इसने सचमुच राजाको ख़बर दिलवायी, तो मेरी बड़ी दुर्गति होगी। न जाने दरबारसे मुझे कैसा कठोर दण्ड दिया जायेगा। इसलिये इसे जल्द ही यहाँसे हटाना चाहिये।" यही सोचकर उसने अपनी स्त्रीको संतोषजनक बाते कह कर चुप करा दिया और आप राजकुमारी वसुमतीको बाज़ारमें बेंच डाल-

नेके लिये ले चला। बाजारमें पहुंचकर उसने उसे एक चौराहे पर खड़ा कर दिया। उस अद्भुत सौन्दर्यमयी राजकन्याको देखनेके लिये हजारों आदमी उसको घेर कर खड़े हो गये।

सचमुच राजकुमारी वसुमतीका सौन्दर्य ऐसा ही अद्भुतथा। उस समय वह बिलकुल सादे कपड़े पहने हुई थी, शरीर पर नामको भी कोई गहना नहीं था। इतने पर भी उसकी सुन्दरता बरबस लोगोंकी आँखे अपनी ओर खींचे लेती थी। जो ही उसे देखता, वही मुग्ध हो रहता था। उसकी आँखें हरिणीकी आँखोंको भी लज्जित किये देती थीं। उसके होठोंकी लाली मूँगेकी लालीको शर्मा रही थी। उसके सुन्दर-सुडौल कण्ठकी उपमा भला निर्जीव शङ्खसे कैसे दी जा सकती थी! कामदेवके मङ्गल-कलशके समान उन्नत्त उरोज, गम्भीर नाभि, उन्नत नितम्ब, कदली-स्तम्भ-सी जंघाएं और कमलपत्रकेसे चरण-युगल देख-कर तो ठीक यही मालूम पड़ता था; मानों अद्वितीय सुन्दरी रति ही स्वर्गसे यहाँ उतर आयी हो! ऐसी अलौकिक सुन्दरी भरे बाज़ारमें बिकनेको आये और खरीदारोंका टोटा रहे, ऐसा भी कहीं हो सकता है? उस अनुपम रूपवतीको मोल लेनेके लिये भला किसका मन नहीं ललचाता?

तीसरा परिछेद
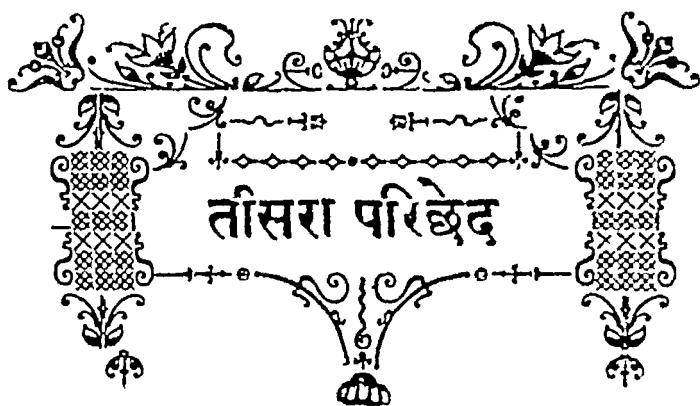
सती और वेश्या।

समस्त नगरमें वात-की-वातमें यह संवाद विजलीकी तरह शीघ्रतासे फैल गया, कि एक अत्यन्त रूपवती रमणी बाज़ारमें विकनेको आयी है। क्रमसे यह ख़बर नगरकी वेश्याओंके कानमें भी पड़ी। इन्हें तो सुन्दर स्त्रियोंकी सदा ही ख़ोज रहती है, इसलिये झुण्ड-की-झुण्ड वेश्याएँ बाज़ारमें आ पहुँचीं। उन वेश्याओंमें से एकने पूर्वोक्त सेनापतिके पास पहुँच कर उसके कानमें धीरेसे कहा, कि तुम इस औरतको और किसीके हाथ न वेंचना—तुम जितना दाम मांगोगे, मैं उतना ही दूँगी। यह सुन, उस लालचीने उससे पाँच सौ अशर्फ़ियाँ माँगीं। वह वेश्या झटपट उतना मूल्य देनेको तैयार हो गयी। सौदा पका हो गया। वेश्याने अशर्फ़ियाँ लाकर गिन दीं। सेनापतिने वसुमतीको उसके हवाले कर दिया वेश्याने वसुमतीको अपने घर चलनेको कहा।

यह सुन, वसुमतीने उससे पूछा,—"बहन ! तुम कौन हो ? किस कुलकी हो ? तुम्हारा रोज़गार कौनसा है ? तुम जातिकी ब्राह्मणी हो, वनियाइन हो अथवा कौन हो ? मुझे तुम्हारे घर जानेपर कौनसा काम करना पड़ेगा ?"

वसुमतीके इन लच्छेदार प्रश्नोंको सुनते ही उस वेश्याने ज़रा गरम होकर कहा,—"मैं कौन हूँ, क्या हूँ, क्या करती हूँ, यह जानकर तू क्या करेगी ? मेरी जाति-पाँति और कुल-शील पूछनेकी तुझे क्या पड़ी है ? मैं कोई क्यों न होऊँ, पर आजसे मैं तेरी स्वामिनी हूँ। यदि तुझे मेरे कुलकी बात जाने विना कल नहीं पड़ती, तो ले, सुनले—"मेरे घर तुझे अच्छे-अच्छे मूल्यवान् गहने-कपड़े पहननेको मिलेंगे, राजकुमारियोंको भी जो दुर्लभ है, वैसा ही उत्तम भोजन खानेको मिलेगा। पान-तमाखूकी तो बात ही मत पूछ, तू मेरे घर रह कर सब तरहके भोग-विलास पायेगी और तेरा जीवन सुख-सागरमें तैरता फिरेगा। इसके सिवा तुझे और क्या चाहिये ? अरी भोली औरत ! एक स्त्रीको इतने सुख मिलें, इससे बढ़कर तो स्वर्गमें भी सुख नहीं है ! मेरे घर रह कर तू राजभवनके भी सुख भूल जायेगी।"

वेश्याकी ये बातें सुन, वसुमतीने कहा,—"मेरी समझसे तो तुम वेश्या हो, इसलिये मैं तो तुम्हारे साथ जानेको राज़ी नहीं हूँ। तुम्हें कुलीन स्त्रियोंकी लज्जाका मूल्य नहीं मालूम है। तुम्हारी वृत्ति पशुओंसे भी गयी बीती है। तुम पुरुषोंको अधम मार्गमें ले जाती और आप बरवाद होती हुई उन्हें भी बरबाद कर

देती हो। तुममें मनुष्यत्वका थोड़ासा भी अंश नहीं है। इस-लिये तुम्हारे घर जानेकी अपेक्षा तो मर जाना कहीं अच्छा है। तुम्हारे यहाँ जानेका तो नाम ही सुनते मेरे बदनमें कँपकँपी पैदा हो जाती है, अतएव मैं तो किसी तरह तुम्हारे साथ नहीं जाने की।"

अहा! कर्मकी गति भी कैसी विचित्र होती है! आज उसीके फेरमें पड़कर एक ऊँचे घरानेकी राजकुमारी भरे बाज़ारमें एक वेश्याके हाथ बिक गयी। आर्हत-धर्मकी उपासिकाको एक अधम वेश्याने ख़रीद किया। कुटिल दैव! तुझे बार-बार धिक्कार है। तूने आज इस पवित्रतामयी राजकन्याको एक दुष्टा वेश्याके पञ्जेमें डाल दिया।

वसुमती क्षत्रिय-कन्या थी। उसमें क्षात्र-तेजके साथ-ही-साथ सतीत्वका तेज भी लहरा रहा था। शील-रत्नकी बहुमूल्यता उसे भली भाँति मालूम थी। फिर वह उस अधम वेश्याके अधीन क्यों होती? उसने वेश्याके बार-बार कहने पर भी उसके साथ जानेसे लगातार इनकार ही किया। तब वह वेश्या उसे ज़बर-दस्ती पकड़ कर ले चली। वेश्याके अपवित्र हाथोंका स्पर्श होनेसे वसुमती को बड़ा दुःख हुआ; पर उस समय उसकी फर्याद सुननेको वहाँ कौन खड़ा था, जिससे वह अपने दिलका दुखड़ा कह सुनाती।

वेश्या और सतीकी यह खैंचातानी देखकर कितनेही लोग हँसने लगे, कितनेही वसुमतीकी कुलीनताका अनुमान कर हाथ मल-मलकर पछताने लगे और कितनेही उदासीन भावसे चुप-

इसी समय आकाशमें धर्म-रक्षक देवता प्रकट हुए और सतीके सतीत्वकी रक्षा करनेके लिये उन्होंने उस अधम वेश्याकी नाक काट डाली। तुरतही वह वेश्या कुरूपा हो गयी और दर्दके मारे छट पटाने लगी।
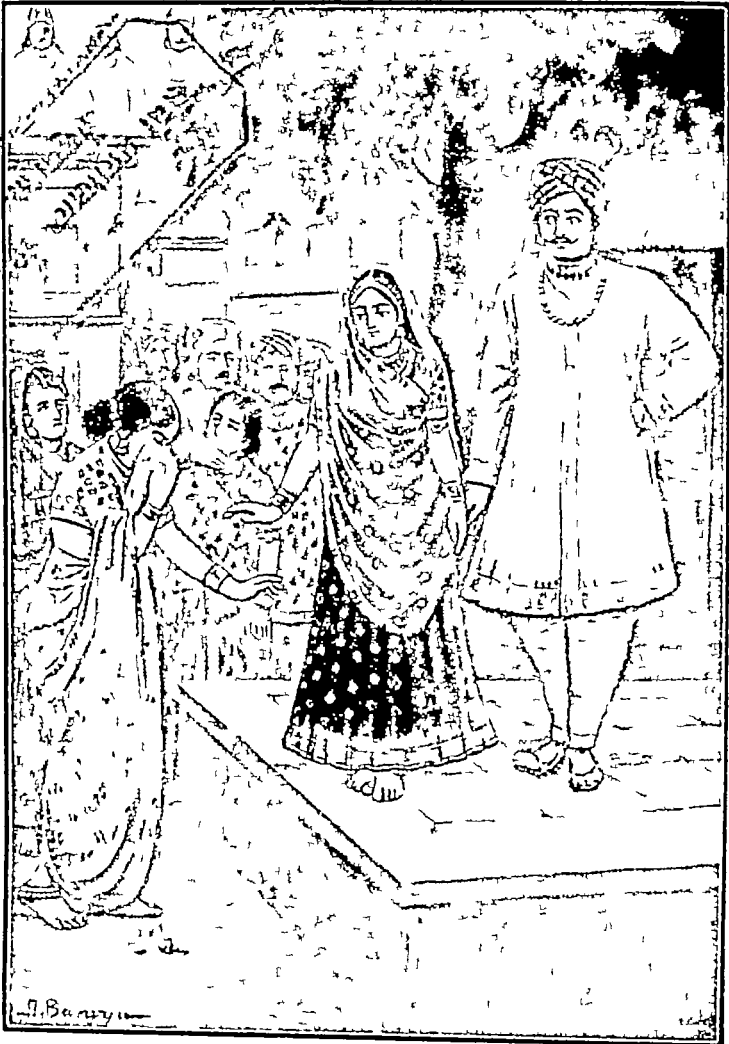
Narsingh Press, Calcutta.

[पृष्ठ १५]

चाप खड़े-खड़े यह तमाशा देखने लगे। इस तरह एक कुलीन बालाको एक वेश्या बल-पूर्व्वक घसीटे लिये जाती है, और कोई कुछ नहीं बोलता—यह देख, वसुमतीने अपने मनमें सोचा,—"बस, अब आत्मघात करनेके सिवा और कोई उपाय नहीं है। जान दे देना अच्छा, पर इस अधर्मके मार्गमें एक पैर भी आगे बढ़ाना अच्छा नहीं है।"

ऐसा विचार कर, वसुमतीने उसी समय आत्महत्या करनेका निश्चय कर लिया। इसी समय आकाशमें धर्म-रक्षक देवता प्रकट हुए और सतीके सतीत्वकी रक्षा करनेके लिये उन्होंने उस अधम वेश्याकी नाक काट डाली। तुरतही वह वेश्या कुरूपा हो गयी और दर्दके मारे छट पटाने लगी। ऐसी अनहोनी बात होते देख, सब लोग उस वेश्याकी कटी हुई नाक देख-देखकर हँसने लगे और उसकी वैसी दुर्दशा हुई देख, अन्यान्य वेश्याएँ भी जान लेकर वहाँसे भाग चलीं। और भी जितने ख़रीदार वहाँ जमा थे, वे लोग भी जिधर सींग समाया, उधरही भाग चले। सब लोगोंके जीमें यह बात बैठ गयी, कि जो कोई इस लड़की को ख़रीदेगा, उसी को नाक काटी जायेगी;

सच है, शील-धर्मकी महिमा बड़ी अपूर्व है। सती स्त्रियोंकी रक्षा के लिये देवता हर घड़ी तैयार रहते हैं। श्राविका वसुमती अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये सदा तत्पर रहती थी, अपने जीवनसे भी अपने शीलको अधिक मूल्यवान् समझती थी, उसने आर्हत-धर्मकी शिक्षा अङ्गीकार कर, अपने उदार अन्तःक-

रणमें स्त्रियोंके परमधन-सतीत्वकी महिमा स्थापित कर रखी थी। इसीलिये देवताओंने उसकी रक्षा की।

धन्य, वसुमती! तुम धन्य हो। सती श्राविका! तुम्हारे उदार और पवित्र जीवनकी जितनी प्रशंसा की जाये, वह कम है। धन्य तुम्हारा शील, धन्य तुम्हारी कुलीनता और धन्य तुम्हारी शिक्षा!

चौथा परिच्छेद
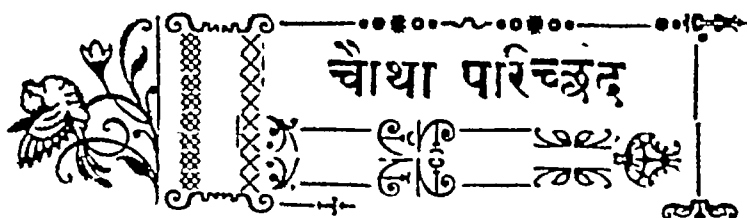
सतीका दासीपन

परम प्रसिद्ध कौशाम्बी-नगरीमें धनवाह नामका एक बडा भारी और नामी-ग्रामी सेठ रहता था। व्यापारियोंमें उसकी बडी मान-मर्यादा थी। वनज-व्योपार करके उसने बडा धन कमाया था। उसकी पत्नीका नाम मूला था। उस वेश्याकी नाक कट जानेपर जब सब लोग वहाँसे भागकर अपने-अपने घर चले गये; तब वह सेनापति वसुमतीको लिये हुए दूसरे बाज़ारमें चला गया। वहाँ अकस्मात् वही सेठ धनवाह भी कहींसे घूमता-घामता हुआ आ पहुँचा। बाजार-में एक लडकी बिक रही है, यह सुनकर वह चुपचाप वहाँ खडा हो गया।

वसुमतीके चेहरे-मोहरेसेही उसने अनुमान किया, कि यह किसी बडे घरकी लड़की है, क्योंकि उसके चेहरे पर कुलीनता और आर्हत-धर्मका अनुपम तेज़ चमक रहा था। उसने सोचा, कि इस बालिकाको ख़रीदकर घर ले चलूं और अपनी स्त्री मूलाकी दासी बनाकर रखूं। यही विचार कर उसने उसे मोल लेनेकी इच्छा प्रकट की। उसकी बात सुनतेही वसुमतीने कहा,—"सेठजी! पहले यह तो बतलाइये, कि आपके घर जानेपर

मुझे कौन-कौनसे काम करने पड़ेंगे? आपके घरमें किस तरह-का धर्म और आचार प्रचलित है?"

सेठने उत्तर दिया,—"भद्रे! तुम्हें ऐसेही काम करने पड़ेंगे, जिनसे तुम्हारे धर्माचरणमें किसी तरहकी बाधा न पड़े। मेरे कुलमें यह रिवाज परम्परासे चला आता है, कि घरके सभी लोग जिनदेवकी पूजा करें, साधुओंकी सेवा-भक्ति करें, धर्म-कथा सुनें और जीव-दयाका पालन करें। इनके सिवा मेरे कुलमें सदासे नवकार-मन्त्रका ध्यान किया जाता है, दिनमें तीन बार पानी छाना जाता है, सुपात्रको दान दिया जाता है, शीलकी रक्षा की जाती है, यथाशक्ति तपस्याकी आराधनाकी जाती है, शुभ भावनाएं करते हुए सात क्षेत्रोंमें धन व्यय किया जाता है। यही हम लोगोंका कुलाचार है। मेरे पूर्वजोंकेही समयसे मेरे घरमें आर्हत-धर्मकी वासना और दृढ़ श्रद्धा चली आती है। इन सब कामोंमेंसे जितने तुमसे बन पड़ें; उतने करना। मेरे घरमें रहते समय तुम्हारे धर्म-कार्यमें कभी किसी प्रकारकी रुकावट नहीं पड़नेकी। दान करते हुए कोई तुम्हारा हाथ न रोकेगा। तप करते हुए कोई तुम्हें उसके रास्तेमें अड़ङ्गा न लगायेगा, त्रिभुवनपति अरिहन्त भगवन्तकी पूजा चर्चा और भक्ति करनेमें कोई तुम्हारी शुभ भावनामें विघ्न न डालेगा।"

धनवाह सेठकी ये बातें सुनकर वसुमतीको बड़ा आनन्द हुआ। उसके हृदयमें हर्षकी धारासी प्रवाहित हो चली। उसने सोचा, कि अब मेरी चिन्ता मिटेगी और मेरी मनचाही बात

हो सकेगी। यही सोचकर उसने मन-ही-मन प्रसन्न होकर कहा,—"सेनापतिजी! यदि तुम मुझे बेचनाही चाहते हो; तो इन्हीं सेठजीके हाथ बेच दो। और किसीके हाथ मत बेचो। मैं तुम्हारे बेचनेका अधिकार नहीं छीना चाहती, पर खरीदारके धर्म और कुलाचारको जाने बिना अपनी इच्छाके विरुद्ध किसीके घर जानेको भी मैं तैयार नहीं हूँ।"

यह सुन, सेनापतिने उसे उसी सेठके हाथ बेंच दिया और आप दाम लेकर चलता हो गया।

इधर सेठ धनावहने वसुमतीको लिए हुए अपने घर आकर अपनी स्त्री मूलाको पुकारा और उसके आनेपर वसुमतीकी ओर इशारा कर कहा,—"प्रिये! यह किसी कुलीनकी कन्या है और विपत्तिमें पड़कर आज बाजारमें बेच डाली गयी है। मैं इसे तुम्हारी दासी बनानेके लिये खरीद लाया हूँ। तुम इसे खूब यत्नसे घरमें रखो। आजसे हम लोग इसे चन्दनबाला कहकर पुकारेंगे। लोग कहा करते हैं, कि 'आकृतिर्गुणान् कथयति' अर्थात् चेहरे-मोहरेसे ही मनुष्यके गुणावगुणकी पहचान हो जाती है। सो इसके चेहरे-मोहरेसे ही भलमनसहत टपक रही है और ऐसा मालूम पड़ता है, कि इसमें बहुतेरे गुण भरे हुए हैं। यह बड़ीही गुणवती लड़की है, यह बात इसके चेहरेसे ही मालूम हो जाती है। तुम दोनों एक साथ रहनेसे एक दूसरीसे बहुत कुछ गुण सीख सकोगी। यह बेचारी इस समय बड़ी बेहाल हो रही है, इस लिये इसके पालन-पोषणसे अपनेको बड़ा पुण्य होगा।

अपने यहाँ धनका कोई टोटा नहीं है, इसलिये यदि यहाँ कुछ दान-पुण्य करना चाहे, तो खुशीसे करने देना।"

अपने पतिके यह वचन सुन, और वसुमतीका अद्भुत रूप देख, मूलाको वडाही आश्चर्य हुआ। साथही उसके मनमें तरह-तरहकी शंकाएँ होने लगीं; क्योंकि स्त्रियोंकी बुद्धि बड़ी ओछी होती है और वे हर बातमें अण्डबण्ड सोचा करती हैं। मूलाने उस युवती और सुन्दरी बालाको देखकर अपने मनमें कुछ और ही विचार किया। उसने सोचा,—"यह कामदेवकी स्त्री रतिके समान परमा सुन्दरी रमणी कदापि दासी होने योग्य नहीं है। मुझे तो ऐसाही मालूम पड़ता है, कि मेरा स्वामी इसे अपनी स्त्री ही बनानेके लिये ले आया है। यह ऊपरसे लोक-दिखावेके लिये और मुझे भुलावा देनेके लिये भलेही इसे बहन बेटीके समान सम्बोधन कर रहा हो, पर इसका मन अवश्यही मलिन है। मैं अब भला इसे क्योंकर सुहाने लगी? मैं बूढ़ी हो चली और यह जवान और खूबसूरत है। इस बुढ़ापेमें मुझे सौतका दुःख भोगना पडा, यह बात तो बहुतही बुरी है; पर इस समय बहुत कुछ कहने-सुननेका काम नहीं है। कारण, सेठपर इस समय इस सुन्दरीके रूपका जादू चढ़ा हुआ है, इसकी सुन्दरतामें इसका मन डूबा हुआ है। अब तो अवसर पाकरही इस काँटेको अपने रास्तेसे दूर करना होगा। अभी कुछ बोलना ठीक नहीं है। अभी चुपचाप बैठे-बैठे तमाशा देखनेका काम है। मेरे जीते जी भला दूसरी कोई स्त्री इस घरकी स्वामिनी बन जायेगी, यह

मुझसे कैसे देखा जायेगा ? चाहे जो हो, इस ढलती उमरमें सेठकी मति मारी गई है, नहीं तो मेरे मौजूद रहतेही यह दूसरी स्त्रीको क्यों कर लाता ? अगर यह इसे योंही घरमें डाल लेता, तो लोग तरह तरहकी बातें उड़ाते, इसी लिये यह इसे दासीके बहाने ले आया है। बहुत अच्छा ! मेरा नाम भी मूला नहीं, यदि मैंने इसे जड़मूलसे ही नहीं उखाड़ फेंका। सिर्फ़ मौक़ा मिलनेकी देर है। सेठको अभी यह नहीं मालूम, कि स्त्रियोंसे कोई देव या दानव भी नहीं जीत सकता। भला ऐसी कौन मूर्ख स्त्री होगी, जो अपने हाथों अपने घरमें विषकी बेल बोयेगी ? बस, आजसे मेरा यही काम होगा, कि इसकी बुराइयाँ और ऐब ढूँढ़ती रहूँ और मौक़ा पाकर इसे घरसे निकाल बाहर कर दूं। भला मूलाके सामने यह किस खेतकी मूली है, जो पन पने पाए ! चन्दनबाला ! तू न जाने कितनी लम्बी-लम्बी आशाएँ करके यहाँ आयी होगी ; पर याद रखना, मूला तुझे कदापि इस घरमें अधिक दिन नहीं ठहरने देगी।"

यही सोच विचार कर वह मूर्ख स्त्री अपने पतिसे कुछ न बोली और मन-ही-मन ज़हरका घूँट पीकर रह गयी। सच है, स्त्रियोंके मनमें जो बात बैठ जाती है, वह फिर निकाले नहीं निकलती और वे चाहे जैसी उल्टी सीधी राह चलकर अपनी मनमानी किए बिना नहीं मानती।

पाँचवाँ परिच्छेद।

सती पर सङ्कट

सेठ धनावह आर्हत-धर्मका उपासक था। इस धर्म के ऊँचे तत्त्वों का उसने अपने जीवनमें आचरण करना शुरू कर दिया था और कौशम्बी-नगरी में पक्का श्रावक माना जाता था। अपने धर्म-बन्धुओं और भगिनीयोंकी सहायता करनेमें वह कभी पीछे पैर नहीं रखता था। जिनभक्ति और आर्हत-धर्मकी उपासनाके द्वारा उसने अपने श्रावक पनको सार्थक कर दिया था। ऊँचे दर्जेके धार्मिक और व्यावहारिक आचारोंने उसके हृदयमें स्थान पा लिया था। अच्छा सा गुरु पाकर उसने सम्यक्त्व-रत्नका मूल्य भली भाँति जान लिया था और उस रत्नकी रक्षा वह समस्त अमूल्य रत्नोंको देकर भी किया करता था। व्यापार करते हुए यदि उसे कभी लाखों रुपयेकी हानि हो जाती; तो भी वह इसे अन्तराय कर्मोंका प्रभाव समझ और लक्ष्मीकी अनित्यताका विचार कर अपने मनमें किसी समय मिथ्यात्वको नहीं आने देता था। सेठ धनावहका हृदय

ऐसा स्वच्छ और पवित्र होते हुए भी, उसकी स्त्री, मूला, उसके अद्भुत और श्रेष्ठ गुणोंका मूल्य नहीं समझ सकती थी।

अहा! कर्मकी भी कैसी विचित्र लीला है? पति और पत्नी-के बीचमें भी कैसा भेद पड़ जाता है? यदि पासमें कोहेनूर-हीरा भी पड़ा हो, तो भीलनी उसका कुछ मोल नहीं समझती। उसका मूल्य कोई जौहरी ही समझ सकता है। इसी तरह मूलाके हृदयमें मिथ्यात्वका अन्धकार छाया हुआ था, इसी लिये वह अपने पतिके इतनी बड़ी उमर बिताकर भी अपने हृदयको ऊँचा न बना सकी। उसके जीमें तरह-तरहकी बुरी भावनाएँ और शङ्काएँ भरी हुई थीं। भला उस बेचारीको, जो सदा अज्ञानके अँधेरेमें ही पड़ी रही, आर्हत-धर्मकी तेज रोशनीका क्या पता लगे?

चन्दनबाला धर्मके रहस्योंको भली भाँति जानती थी। उसे किसी अच्छे श्रावककी तलाश थी, जिसके साथ वह नित्य धर्म-चर्चा करे और आर्हत-धर्मकी ऊँची-ऊँची भावनाओंका विकास हो, इसके लिये वह किसी श्राविकाके साथ परिचय हो जानेके लिये लालायित थी। सद्गुणकी सुगन्धसे उसका सारा शरीर सुवासित हो रहा था। वह सम्यक्त्वके अलङ्कारसे अलङ्कृत हो रही थी। सेठ धनवाहके घर आनेपर ज्यों-ज्यों उसका सेठके साथ परिचय बढ़ता गया, त्यों-त्यों उसके हृदयका उल्लास बढ़ता गया। धर्मकी विचित्र वार्त्ताएँ सुन-सुनकर उसके हृदयमें हर्षकी तरङ्गें उठने लगीं। धर्मकथापर उसका ऐसा अनुराग

देखकर सेठ भी उसे दिन-दिन अधिक प्यार करने लगा। उसके सदाचार और धर्म-प्रेमको देखकर सेठ उसपर अधिक अनुराग रखने लगा। स्वयं धर्मपर बड़ी श्रद्धा रखनेके कारण सेठ चन्दनबालाको बहुत चाहने लगा। चन्दनबालाकी विनयने सेठका मन मोहित कर लिया। वह उसे अपनी बेटीसे भी बढ़कर मानने लगा। सेठ बराबर उसे अपनी लड़की ही समझता और वैसेही उसका मान भी करता था। इस प्रकार चन्दनबाला धर्मका आचरण करती हुई उस घरमें रहने लगी। उस दिन जो चन्दनबाला दासी होकर यहाँ आयी थी, वह क्रमशः सेठकी पुत्री बन गयी और वह भी सेठको अपना पिता समझने लगी।

एक दिन मूला किसी पड़ोसिनके घर गयी थी। इसी समय सेठ धनवाह अपने घर आया। उसी समय चन्दनबाला दौड़ी हुई आकर अपने पिताके समान सेठके पैर धोने लगी। पैर धोते समय चन्दनबालाके खुले हुए केश ज़मीनमें लोट रहे थे। यह देख, सेठने उसके बालोंके गुच्छेको ज़मीनसे उठाकर अपनी गोद में रख लिया। इसी समय एकाएक खोटी बुद्धिवाली मूला वहाँ आ पहुँची और उस दृश्यको देखते ही काँप उठी। एक तो पहलेसे ही उसके मनमें सन्देहका भूत बैठा हुआ था, अबके यह दृश्य देख, उसका सन्देह और भी दृढ़ हो गया। उसे अपनी शङ्का उचित और सत्य मालूम पड़ने लगी। उस अल्पमति स्त्रीको भले-बुरेकी पहचान पहलेसे ही नहीं थी ; फिर उसमें सुविचार कहाँसे आया ? उसके कलेजेमें आगसी धधक उठी। चन्दन-

पैर धोते समय चन्दनबालाके खुले हुए केश जमीनमें लोट रहे थे। यह देख, सेठने उसके बालोंके गुच्छेको जमीनसे उठाकर अपनी गोद में रख लिया। इसी समय एकाएक खोटी बुद्धिवाली मूला वहाँ आ पहुँची और उस दृश्यको देखते ही काँप उठी।

Narsingh Press, Calcutta

[पृष्ठ २४]

बालाकी ओर देखते ही उसके हृदयमें प्रबल ईर्षाग्नि धधक उठी। अब उसे किसी तरहके प्रमाण और गवाहीकी जरूरत नहीं थी। उसने सोचा,—"हाँ, सेठ अवश्यही इस रूपवती रमणीपर मोहित है। जब यह उसके बाल सुलझा रहा है, तब अवश्यही यह उसे अपनी स्त्री बना चुका है! भला कही सुनी बातके लिये तो गवाही-सुबूतकी ज़रूरत होती है, अब तो मैं प्रत्यक्ष अपनी आँखों देख रही हूँ, अब किसी प्रमाणकी क्या आवश्यकता है? धन, सम्पत्ति आदिकी कोई कमी घरमें है ही नहीं, तिस पर यह सुन्दर-सलोनी नायिका मिल गयी। फिर सेठ बेचारेकी तो बात ही क्या है, बड़े-बड़े मुनियोंके मन डोल गये! भला ललनाकी लुनाई पर किसका मन लुब्ध नहीं हो जाता? अच्छा हो, यदि मैं इस मृगनयनीको सेठसे पूरी लगन लगनेके पहले ही घरसे बाहर कर दूँ, अथवा विष देकर इसे मारही डालूँ। क्योंकि पीछे जब दोनोंकी गाढ़ी प्रीति हो जायेगी, तब सेठ मुझे ही रास्तेका काँटा समझकर दूर कर देगा और इसी रसीलीसे शादी कर लेगा। मेरे जीते-जी सेठ ऐसा कदापि नह करने पायेगा। परन्तु मुझे भी अब अपने काममें देर नहीं करनी चाहिये। जब तक सेठ अपने मनके मोदक उड़ानेमें ही मस्त है, तब तक मैं इसे स्वर्ग ही पहुँचा दूँ, तो ठीक हो! फिर तो मैं एकदम बेखटके हो जाऊँगी। इस विषकी बेलको उखाड़ कर फेंके बिना मुझे चैन नहीं आनेका। यदि इस काममें देर हुई, तो इसका बुरा परिणाम मुझे ही भोगना पड़ेगा। फिर अवसर बीत जानेपर

पछतानेसे ही क्या होगा ? एक बार इस सुन्दरीका जाल तोड़ देनेपर सेठ फिर कभी इस तरहकी हरकत न करेगा ।"

इसी तहरके अधम विचारोंके प्रभावमें पड़ कर मूला सेठानीने बेचारी निरपराध चन्दबालाको मार डालनेका पूरा निश्चय कर लिया । ओह ! स्त्रियोंकी दुष्टता भी परले सिरेकी होती है । अपनी नासमझीके कारण वे नागिनसे भी भयङ्कर बन जाती हैं और अपने स्वार्थके लिये दूसरोंकी हत्या तक कर डालनेको तैयार हो जाती हैं । इसीसे तो पण्डितोंने स्त्रियोंको राक्षसी तककी उपमा दे डाली है । बात भी बहुत कुछ ठीक है ।

मूलाके कुविचार उसके माथेमें चक्कर लगाने लगे । वह चन्दनबालाकी जान लेनेके लिये पूरी तरह तैयार है । केवल अपने सुखमें बाधा पड़नेकी झूठी कल्पनासे उसका हृदय इस प्रकार अधीर हो गया है । हिंसा-पिशाचिनीने उसके मनोमन्दिर-में प्रवेश कर, उसे एकदम भले-बुरेकी पहचान करनेमें असमर्थ बना दिया है । उसे हत्या और पापका कुछ भी भय नहीं है । एक पवित्र और निर्दोष अबलाका वध करनेके लिये वह एक बहादुर सिपाहीसे भी अधिक बलवती बन गयी है । ऐसी अवस्थामें उसके मनमें शुभाशुभका विचार कैसे आये ? उसे भले-बुरेका ज्ञान कहाँसे हो ?

छठा परिच्छेद।
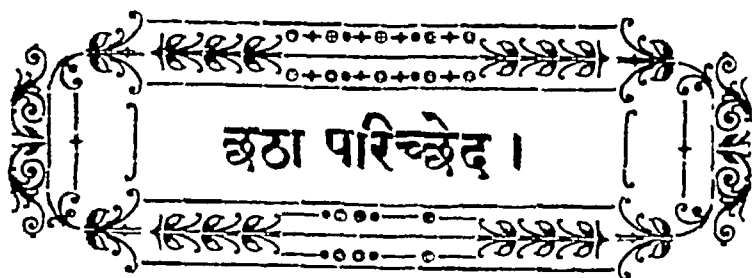
सतीका अनुपम धैर्य

दूसरे दिन सवेरे ही, जब सेठ धनवाह प्रतिदिनकी भाँति, धन्धे रोजगारके लिये, अपनी दूकान पर चला गया, तब मौक़ा देखकर मलिन मन वाली मूलाने एक नाईको बुलवाकर चन्दन बालाके सिरके रेशमसे बाल कटवा डाले। उस की सुन्दर और काली-काली नागिनसी लटें काट डाली गयी। उसके सिरकी सारी शोभा जाती रही। पर इतनेसे ही उसे सन्तोष नहीं हुआ। उसने चन्दनबालाके पैरोंमें लोहेकी बेड़ी डाल दी और उसे एक तहख़ानेमें बन्दकर बाहरसे ताला बन्द कर दिया। इस तरहका क्रूर कर्म करके मूलाको शोक या, दुख न होकर उलटा आनन्द ही हुआ। अधम जनोंका ऐसा ही स्वभाव होता है। वे बुरे काम करके भी मनमें बड़े सुखी होते हैं और ऐसेही कामोंके करनेमें अपनी बडी भारी बहादुरी समझते हैं। उस समय चन्दनबालापर अत्याचार करते हुए मूला-

के मनमें एक ही बात बैठी हुई थी। वह बात यही थी, कि सौतको किसी तरहका दुःख देनेमें पाप नहीं लगता।

एक दिन उसने किसी स्त्रीसे पूछा था,—"भला बहन! यह तो बतलाओ, कि सौत अच्छी है या सूली ?" इसके उत्तरमें उस स्त्रीने कहा था,—"बहन! सौतसे तो सूली ही लाख दर्ज अच्छी है; क्योंकि सूलीका सङ्कट तो एक ही बार सहना पड़ता है और सौत जिन्दगी-भर जलाती रहती है। उसे तो देखते ही आँखोंमें शूलसा विँध जाता है। सौतसे पद-पद पर पीड़ा ही होती है और हृदयमें रात-दिन आगसी धधकती रहती है, जो भीतर-ही भीतर शरीरको ज़लाकर ख़ाक कर देती है। जिस स्त्रीके पूर्व जन्मोंके बड़े पापोंका उदय होता है, उसीके सिर सौत आती है। फिर सौतके आते ही उसके सुख-सौभाग्यका सूर्य अस्त हो जाता है। वह दुःखके अँधेरे गड्ढेमें गिर पड़ती है। किसी झोपड़ेमें रहकर सुखी रोटी खा लेना अच्छा, पर सौतके साथ राज्यमहल में रहना भी अच्छा नहीं। स्त्रीके लिये सौत बड़ा भारी दैवीकोप है। जिस स्त्रीको सौतियादाहका शिकार होना पड़ता है, उस से तो विधवाँए कहीं अच्छी हैं। बहन! भगवान् न करे, कि अपनी कोई बैरिन भी सौतके फेरमें पड़े।

मूलाको रह-रह कर उस स्त्री की यही बातें याद आती थीं और वह अपनी करनीपर पछतानेके बदले और भी आनन्दित हो रही थी। इतनेही अल्प समयमें सौतका काँटा दूर करनेके लिये उसके प्राण उतावले हो रहे थे। फिर

अपनी मनमानी कारवाई करनेका अवसर पाकर उसे आनन्द क्यों न हो ?

इधर सती चन्दन बाला इतने सङ्कट सहकर भी चुपचाप थी। उस पवित्र-हृदया बालाके मनका धैर्य तब तक लुप्त नहीं हुआ। उसमें सङ्कट सहन करने की पूरी शक्ति थी, वह समझती थी कि विपत्ति बड़ोंके लिये कसौटी मात्र है। इस कसौटी पर कसे जानेपर ही मनुष्यके बड़प्पन की पहचान होती है। किसी कविने कहा भी है,—

घृष्टं घृष्टं पुनरपि पुनश्चन्दनं चारुगन्धं,
छिन्नं छिन्नं पुनरपि पुनः स्वादु चैवेक्षुदण्डम्।
दग्धं दग्धं पुनरपि पुनः काञ्चनं कान्तवर्णं
न प्राणांते प्रकृतिविकृतिर्जायते चोत्तमानाम्॥

अर्थात्—"चन्दनको बार-बार रगड़ते चले जाओ, पर वह सदा सुन्दर सुगन्ध ही देता रहेगा। ईखको जितनाही काटते जाओ उतना ही अधिक मीठा स्वाद मिलता जायेगा। सोने को चाहे जितनी बार तपाओ, वह उतना अधिकाधिक चमकीला होता जायेगा। इसी तरह चाहे जान चली जाय, पर बड़ोंकी प्रकृति ज्यों-की-त्यों बनी रहती है। उसमें तनिक भी हेरफेर नहीं होता।

सती चन्दनबालामें सज्जनता कूट-कूट कर भरी हुई थी। उसके हृदयके शान्ति-सागरमें इस तूफ़ान और आँधीके झकोरे-से खलबली पैदा होने वाली नहीं थी, ऐसी ऐसी अनेक परिक्षाओं

मे उत्तीर्ण होनेका साहस उसमें भरा हुआ था। मूलाने उसपर इतना अत्याचार किया, तोभी वह उस पर क्रोधित नहीं हुई। वह सती कषायके स्वरूप और उसके फलकी विषमताको भली भाँति समझती थी। चाहे उसपर कैसीही आफ़तका पहाड़ टूट पड़ता, तो भी उसकी आत्मा पर कुछ असर नहीं पहुँच सकता था। फिर मूलाकी क्या हक़ीकत थी, जो उसे तकलीफ पहुँचा कर विचलित कर देती ? चन्दनबालाके मनोमन्दिरमें भगवान जिनेश्वरकी मूर्त्ति विराजमान थी। फिर उसके हृदयकी पवित्रताको कौन नष्ट कर सकता था ? जिस तहख़ानेमें वह कैद थी, उसमें घूप अँधेरा छाया हुआ था; पर उसके ज्ञानकी ज्योति जगमगा रही थी, जिसके आगे घनेसे घना अन्धकार तुच्छ था। उस घोर अन्धकारसे भरे हुए तहख़ानेमें पड़ी रहने पर भी चन्दनबालाके चित्तमें तनिक भी क्षोभ नहीं हुआ। ऐसी विकट स्थितिमें पड़कर भी शुभ भावनाओंका तार न टूटा और वह सती अपने निर्मल अन्तःकरणमें विचार करने लगी,—

ओह ! ऐसे-ऐसे लाख सङ्कट आये, तो भी कुछ परवा नहीं। मुझे सदा— सब समय— एकमात्र वीतरागका ही भरोसा है। वह संसार-तारक त्रिलोक-स्वामी मेरे मनोमन्दिर में सदा जाग्रत हैं। मेरा हृदय इस अमूल्य अलङ्कारसे सदा ही अलंकृत रहेगा। आर्हत धर्मकी उच्च भावना-रूपी कल्पलता मेरे मानसिक क्षेत्रमें सदा लहलहाती रहे, और कषाय-रूपी कीड़े और पशु उसे न खा डालें इसी लिये मुझे सावधान करनेके निमित्त इस समय मेरे

पूर्व जन्मके विपरीत कर्मोंका उदय हुआ है। पहले तो उस सेनापतिने मुझे और मेरी माताको राजमहलसे निकाला। इसके बाद मार्गमें ही मेरी माता की मृत्यु हुई और मैं एक नीच वेश्याके हाथ वेंच डाली गयी। यह तो अच्छा हुआ, जो मैं उस कुटिल कामिनीके हाथमें नहीं पडने पायी, नहीं तो मालूम नहीं, मेरा क्या हाल होता ? अन्तको यहाँ आकर भी मैं आफ़तमें ही पड़ी। पर अव इन सब वातोंकी चिन्ता करनेकी कोई आवश्यक्ता नहीं है। यह तो मेरे भाग्यका उदय ही हुआ जो मुझे ऐसा एकान्त स्थान मिल गया। यहाँ मैं भली भाँति शान्तिके साथ धर्म-ध्यान कर सकती हूँ, जिससे मेरे पूर्वके सभी अशुभ कर्म ध्यानाग्निमें जलकर भस्म हो जायेंगे। यहाँ कोई मेरे चित्तमें क्षोभ नहीं उत्पन्न कर सकता। भगवान् इस सेठानीका भला करे, जिसने मुझे ऐसा अच्छा अवसर दिया और इस प्रकार मेरे धर्मध्यानमें मेरी मदद-गार वन गयी। सुखचैनमें पड़कर मनुष्य धर्मकी बात भूल जाता है, इस लिये मूलाने अच्छा ही किया, जो मुझे अज्ञानकी नींदमें पड़नेसे रोका और मेरी आत्माको जाग्रत किया। यदि मैं मूला के घर नहीं आयी होती, तो मुझे इस प्रकार शुभध्यान करनेका मङ्गलमय अवसर कहाँसे मिलता ? अब तो यहीं शान्तिके साथ रहना और अशुभ कर्मोंका नाश करना होगा। कर्मोंके मारे मलिन बनी हुई आत्माको भगवान्के ध्यानमें लगाकर मैं पवित्र कर डालूँगी। इस प्रकार निर्मल ध्यान करते-करते यदि मेरी मृत्यु ही हो जाये, तो इस ध्यानके प्रभावसे मेरी आत्माका उद्धार

हो जायेगा। मैं सद्गतिको प्राप्त हूंगा और मेरे अशुभ कर्मोंका परदा दूर हो जायेगा। औरोंकी दृष्टिमें मैं भले ही दुखमें पड़ी हूँ; पर मैं तो इसे सुखही समझती हूँ; क्योंकि 'तत्सुखं यत्र निर्वृत्तिः' अर्थात् जहाँ आधि-व्याधि और उपाधि नहीं है, वहीं सुख है। इन तीनोंसे जो आत्मा परे हो जाती है, वह सदैव सुखी रहती है। मूलाने मुझे इन तीनोंसे रहित स्थान दे रक्खा है। इसलिये वह मेरी बड़ी भारी हितैषिणी है। उसने मेरी बुराई करते भलाई कर डाली।"

इसी प्रकारके विचारोंमें पड़ी हुई चन्दनबाला उसी तहखानेमें में पड़ी-पड़ी पञ्च परमेष्ठी-रूपी महामन्त्रका जप करने लगी। इस मन्त्रका ध्यान करनेसे उसको बड़ी शान्तिका अनुभव होने लगा। आत्मा जब ऊँचे विचारोंमें लीन रहती है, तब बाहरी संकटोंका उसपर कुछ भी असर नहीं होने पाता। जैसे परमात्माके ध्यानमें लीन योगियोंके मनमें बाहरी उपाधियोंका कुछ असर नहीं होता, वैसे ही नवकार मन्त्रके ध्यानमें लगी हुई चन्दनबाला को दुःखके बादलोंका उमड़ना भी नहीं मालूम पड़ा। वह अन्धेरे तहखानेमें कैद थी, जहाँ उसे दिन रातका भी पता नहीं लगने पाता था। तो भी उच्चभावनामें मस्त रहनेके कारण उसकी आत्मा जैसा सुख अनुभव कर रही थी, वह मूला या अन्य साधारण मनुष्योंकी समझमें कैसे आ सकता है? संसारके मोहजालमें फँसे हुए मनुष्य, उच्चकोटिके अध्यात्माओंकी शान्तिमयी स्थितिका सपनेमें भी अनुमान नहीं कर सकते। यही नहीं स्वयं वे ही

भव्य जीव, जो आत्मोन्नतिमें लीन रहते हैं, अपने उस सुखानुभव को शब्दों द्वारा प्रकट कर दूसरोंको नहीं बतला सकते। फिर औरोंकी तो बात ही क्या है?

उस तहखानेमें चन्दनबाला तीन दिनों तक बिना कुछ खाये-पीये पड़ी रही। ध्यान और तपके प्रभावसे उसके कठिन कर्म-बन्धन ढीले हो-हो कर टूटने लगे। इधर तप और ध्यान घने कर्म-जालोंको छिन्न करने लगे, उधर उस परम सतीकी मनोभावना क्षण-क्षण बढ़ती चली गई। आत्माकी उस उच्च दशाके कारण वह अपूर्व आनन्दका अनुभव कर रही थी। धन्य सती! तुम्हें बार-बार धन्यवाद है।
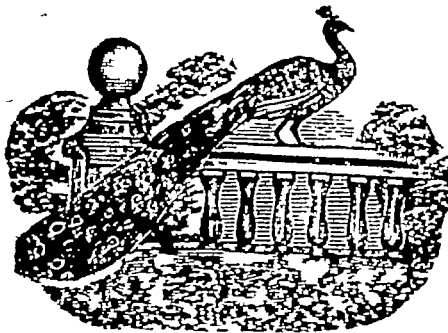
महाप्रभु महावीरकी कठिन प्रतिज्ञा।

अन्तिम तीर्थङ्कर श्रीमहावीर उस समय छद्मस्थ अवस्थामें विचरण कर रहे थे। उन्होंने पौषकृष्ण प्रतिपदाके दिन कौशाम्बी-नगरीके बाहर आकर यह विकट प्रण किया, जिस स्त्रीके पैरोंमें बेड़ीं पड़ी हो, जिसका सिर मुँड़ा हुआ हो, जो तीन दिनोंसे भूखी-प्यासी हो रही हो, जो राजाकी लड़की होकर भी दासी बन रही हो और एक पैर दरवाजेके बाहर तथा दूसरा उसके भीतर किये बैठी हो, वही यदि मेरे पास आकर भिक्षाका अवसर व्यतीत होनेपर मुझे उड़दकी दाल सूपसे दे, तभी मैं पारणा करूँगा, नहीं तो नहीं। इस तरह प्रति दिन मध्याह्नके समय भिक्षाके लिये फेरा लगाते हुए चार महीने बीत गये, पर प्रभुका यह प्रण किसी तरह पूरा नहीं हुआ।

उन दिनों कौशाम्बी-नगरीके राजा शतानीकके प्रधान मन्त्री सुगोत्र नामके एक बड़े ही बुद्धिमान मनुष्य थे। उनकी स्त्रीका नाम नन्दा था। दोनों ही स्त्री-पुरुष जैन-धर्मके माननेवाले थे। इस धर्मके ऊँचे तत्त्वोंका वे सदा अभ्यास करते थे। वे बड़ी

सावधानीके साथ सम्यक्त्व-रत्नकी रक्षा करते थे। वे कभी ऐसा कोई काम नही करते थे, जिससे सम्यक्त्वमें लाञ्छन लगे।

एक दिन भिक्षाके लिये कठिन प्रण ठाने हुए भगवान् महावीर घूमते-फिरते हुए उन्ही मन्त्रीके घर आ पहुँचे। परन्तु जब उन्होंने वहाँ भी अपना प्रण पूरा होता नहीं देखा, तब वहाँसे भी चले गये। इस प्रकार बहुत दिन बीत जानेपर भी जब प्रभुका प्रण पूरा नहीं हुआ, तब भिक्षा नहीं ग्रहण करनेके कारण उनका शरीर दिन-दिन दुर्बल होने लगा।

उस दिन मन्त्री-प्रवर सुगोत्रकी स्त्री, नन्दा, प्रभुके शुभागमन-की बात सुन, मन-ही-मन परम आनन्दित हो, अनेक उत्तमोत्तम पदार्थ लिये हुई उनके पास आयी थी, पर प्रभुने जब देखा; कि मैंने जिस तरहकी स्त्रीके हाथसे भिक्षा लेनेकी ठानी है, यह तो वैसी नहीं है, तब वे चुपचाप वहाँसे चल दिये। यह देख, नन्दा-के मनमें बड़ा भारी खेद हुआ। उसने उदास मुँह बनाये, अपने स्वामीके पास आकर कहा,—"प्राणनाथ! भला यह तो कहिये, कि स्वामी किसीके घर भिक्षा क्यों नहीं ग्रहण करते? मैं उनके लिये बड़े ही अच्छे-अच्छे पदार्थ ले गयी थी, पर वे उनकी ओर से मुँह फेर कर चुपचाप चले गये। इसका क्या कारण है? क्या हमारा कभी ऐसा भाग्योदय नहीं होगा, कि स्वामी हमारे यहाँ भिक्षा ग्रहण करें?"

यह सुन, सुगोत्र मन्त्रीने कहा,—"प्रिये! मालूम होता है, कि धर्मवीर; महानुभाव, जगत्स्वामीने कोई विकट प्रतिज्ञा कर रखी

है। बहुत दिनोंसे कुछ भी आहार न करनेके कारण उनका शरीर गलता चला जाता है, यदि बहुत दिनोंतक प्रभुकी प्रतिज्ञा इसी तरह अधूरी रह गयी, तो बिना अन्नके प्रभुको शीघ्रही काल-धर्म प्राप्त हो जायेगा।"

पतिके ये वचन सुन, नन्दा बड़ी चिन्तामें पड़ गयी। नन्दा बड़ी ही पवित्र श्राविका थी। उसकी मनोभूमि में जिनभक्ति-रूपिणी कल्प-लता सदा लहलहाती रहती थी। जिनपूजा और जिनभक्तिके प्रभावसे उसका अन्तःकरण अत्यन्त निर्मल बना हुआ था। आर्हत-धर्मकी दिव्य ज्योति उसके ललाटपर चमकती रहती थी। अपने साधर्मी बन्धुओं और बहनोंको वह हृदयसे प्यार करती थी और उनके धर्मके साधनमे सहायता पहुचाया करती थी। वह सदा यही चाहती थी, कि सारे संसारमें जैन धर्मका एकच्छत्र-राज्य फैल जाये। वह प्रायः अपने पतिके साथ जैन-धर्मके ऊँचे तत्त्वोंके विषयमे प्रश्नोत्तर किया करती थी। सूक्ष्म-विषयोंके सम्बन्धमें भी वह कभी अपने मनमें शङ्काको स्थान नहीं मिलने देती थी। कौशाम्बी नरेश राजा शतानीककी पत्नी रानी मृगावतीके साथ उसका बड़ा प्रेम-भाव था। मृगावती चेटक राजाकी पुत्री थी। उसके मनमे भी जैनधर्मका अतिशय अनुराग और अभिमान भरा हुआ था। अपने श्राविका-धर्मका वह भली भाँति पालन करती थी। रानी मृगावती प्रायः राजा शतानीकको जैन-धर्मकी प्रभाव वृद्धी करने की प्रेरणा किया करती थी, राजा के हाथों जैन धर्म की प्रभावना होती देख, उसके

मनमें बड़ा आनन्द होता था। नन्दा और मृगावती दोनों परम श्राविकाएँ थीं। वे सदा साथ रहती हुई आर्हत-धर्मकी आराधना किया करती थीं। सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, जिन-पूजा इत्यादि धर्मकृत्योंका वे दोनों श्राविकाएँ एक ही साथ आचरण किया करती थीं और इससे करके अपनेको कृतकृत्य मानती थीं।

एक दिन नन्दाने मृगावती से कहा, कि न जाने क्यों भगवान् आहार नहीं करते,—उन्हें किसी प्रकार आहार कराना चाहिये। इस प्रकार सलाह कर उन दोनोंने एक ही साथ भगवान्को भोजनके लिये निमन्त्रित किया। परन्तु इस वार भी अपनी प्रतिज्ञा पूरी होती न देख, प्रभुने आहार नहीं ग्रहण किया। इससे उन दोनों श्राविकाओंके मनमें बड़ा भारी सन्ताप हुआ। अन्न विना दिन-दिन दुर्बल होते जाते हुए प्रभुके शरीरको देखकर दोनोंको दारुण दुःख हुआ। उन्होंने बहुत कुछ सोचा-विचारा और बड़े-बड़े उपाय किये, तोभी उन्हें प्रभुके कठिन अभिग्रह (प्रतिज्ञाकी) बात नहीं मालूम हो सकी। इसलिये वे रात-दिन इसी चिन्तामें पड़ी रहने लगीं।

इधर धनावाह सेठकी पत्नी मूलाने जब चन्दनबालाको तहखानेमें क़ैद कर दिया, तब धनावहने दूकानसे घर आने पर उसे कहीं नहीं पाकर अपनी पत्नीसे पूछा,—"प्यारी! आज चन्दनबाला क्यों घरमें कहीं दिखाई नहीं देती? क्या वह कहीं गयी हुई है? अथवा पौषध व्रत ग्रहण कर कहीं एकान्तमें जा बैठी है?

परन्तु मूलाने साफ-साफ बातें न कह कर सेठको टेढ़े-मेढ़े जवाब देकर टरका दिया। इसी तरह दो दिन बीत गये। तीसरे दिन, चन्दनबालाको देखने के लिये सेठका चित्त अतिशय व्याकुल हो उठा। उत्कण्ठाके मारे उसका कलेजा मुँहको आने लगा। उसने बड़े आग्रहके साथ मूलासे पूछा,—"सेठानी! तुम सच-सच बतलाओ, कि मेरी चन्दनबाला कहाँ गयी? मुझे इस समय उसे देखे बिना खाना-पीना भी अच्छा नहीं लगता। जिसे देखे बिना मुझसे घड़ी भर भी नहीं रहा जाता था, वह हँसती हुई सूरत आज तीन दिनोंसे मेरी नज़रोंकी ओट हो गयी है। उस पवित्रताकी मूर्त्तिके प्रसन्न मुख-मण्डलको देखे बिना मुझे पल भर भी चैन नहीं आनेका। मेरा चित्त अतिशय व्याकुल हो रहा है।"

यह सुन, मन-ही-मन हजारों पेंचोंताव खाकर मूलाने कपट का जाल फैलाते हुए कहा,—"सेठजी! चन्दनबाला अब वह चन्दनबाला नहीं है। इन दिनों उसमें रसिकताकी मात्रा बहुत बढ़ गई थी—वह सारा दिन नौजवान छोकरोंके साथ प्रेमालाप किया करती थी। एक घड़ी भी चुपचाप घरमें टिकना उसके लिये मुश्किल हो रहा था। मालूम नहीं, वह रसीली छबीली इस समय कहाँ जाकर राग-रङ्गमें पड़ी होगी! स्वामी! मुझे तो ऐसा मालूम होता है, कि अगर उसका कोई सम्बन्धी यहाँ आयेगा, तो उसके ये लक्षण देख, उसे यहाँसे ज़रूरही हटा ले जायेगा। वह छबीली छोकरी तुम्हारी आँखोंमें बस गयी है; पर मुझे तो उसको ख़रीदनेमें जो धन लगाया गया, उसीका

खेद हो रहा है। पहले तो तुम उसे दासी बनाकर घर ले आये; पर अब तो वह तुम्हें मेरी अपेक्षा भी अधिक प्रिय मालूम होती है। यदि यह बात न होती, तो उसे देखे बिना क्यों बेचैन होते ? क्यों अन्न-व्यंजन नहीं भाता ? उस छबीली-रसीली की मीठी मुसकान और रस-भरी तानमें तुम मस्त हो रहे हो, इस-लिये भोजन तो क्या, तुम्हें यह भवन भी न सुहाता होगा और वन सा मालूम पड़ता होगा। धन-सम्पत्ति मिट्टीके ढेलेके समान दिखाई देती होगी। उस मोहनीके मोहमें पड़कर तुम्हारी मति-मारी गयी है। इस लिये इस समय तुम्हें किसी अच्छेसे वैद्य-का आश्रय लेनेकी आवश्यकता है। नाथ! सच पूछो, तो उसके चमकते हुए ललाटमें दासीपन नहीं लिखा था, तुमने उसे ज़बर-दस्ती दासी बना डाला था। यहाँ आनेपर तुम्हारी मिहरबानीसे उसे एक दिन भी दासीका कार्य नहीं करना पड़ा। उसकी प्रबल भाग्यरेखाने उसे इस घरमें मेरी अपेक्षा भी अधिक मान-आदर दिला दिया। उस नाज़ुक-बदन नाजनी की नेहभरी नज़रोंको देखे बिना तुम्हारा चित्त चंचल हो, मति मारी जाये और दिल दुखने लगे, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? मेरे मनमें भी उस रमणीय रमणीकी रमणीयता रम रही है, पर इस समय तो उसके सुन्दर मुखड़ेका दर्शन दुर्लभ हो गया है। सेठजी! तुम्हारे मनमें उसके प्रति जैसी प्रीति उत्पन्न हो गयी है, यदि उसके मनमें भी वैसी ही प्रीति होती, तो वह तुम्हें छोड़कर इतनी देरतक कभी इधर-उधर नहीं रहती; परन्तु उस बेचारी कोमल-

मति बालिकाको इस बातका क्या पता है, कि मेरे वियोगमें सेठजीको खाना-पीना भी हराम हो रहा है। अरी चतुर-चालाक चन्दनबाला! आ जा, जल्द चली आ। देख, बेचारे सेठजी तेरे बिना अन्न-जल छोड़े बैठे हैं। अब यदि आनेमें देर करोगी; तो सेठजीका फूलसा कोमल शरीर झट मुरझा जायेगा। अरी चन्दन! यदि तू सचमुच चन्दन हो, तो अभी आकर अपने वियोगमें जलते हुए सेठजीको शीतल कर दे।"

मूलाके इन कड़वे, कसैले और ताने भरे वचनोंको सुन कर भी सीधे-सादे सेठकी समझमें नहीं आया, कि वह किस मतलब से ये बातें कह रही है। इसीलिये उस बेचारेके मुँहसे अनायास यह बात निकल पड़ी,—"यदि वह सती बाला नहीं आयेगी, तो मैं अवश्यही अनशन व्रत ग्रहण कर लूँगा।"

इसी समय एक बुढ़ी और दयावती दासीने सेठके पास आ उसे एकान्तमें ले जाकर कहा,—"सेठजी! तुम किसके भुलावेमें पडे हो? तुम्हारी चन्दनबाला आज तीन दिनोंसे अँधेरे तहख़ानेमें क़ैद है। इन तीन दिनोंमें किसीने उस बेचारीकी सुध भी नहीं ली है। समय पर भोजन-पानी नहीं मिलनेके कारण वह कुसुमके समान कोमल अङ्गोंवाली बाला तड़प-तडपकर मर जायेगी। इस लिये तुम जल्द उसकी ख़बर लो। सेठानीने मुझे मना कर दिया था और बहुत डराया-धमकाया था, इसीलिये मैं इन तीन दिनोंतक कुछ भी नहीं कह सकी। परन्तु आज आपकी बेचैनी देखकर मुझसे नहीं रहा गया, इसी लिये मैंने आपसे

सारा कच्चा चिट्ठा कह सुनाया। आपकी पत्नी मूला स्त्री नहीं, राक्षसी है। तुम्हारी यह बेचैनी और घबराहट देखकर भी उसके दिलमें दया नहीं आती और प्रेम नहीं उत्पन्न होता। बेचारी चन्दनबालाको सेठानीने बहुत सताया ; पर वह ऐसी सुशील है, कि इसके उपद्रव चुपचाप सहती चली गयी। दूसरी कोई दासी अपनी मालिकिनके इतने अत्याचार-उपद्रव कभी सहन नहीं करती , पर धन्य है, वह पवित्र बाला, जिसने बिना एक शब्द बोलेही गूँगी बनकर सब कुछ सह लिया। सेठजी ! अब देर न करो। वह बेचारी तीन दिनोंसे भूख प्याससे तड़पती हुई पड़ी है—उसे जल्द चलकर बचाओ। देखना, सेठानीसे यह बात न कहना, कि यह भेद मैंनेही खोला है, नहीं तो वह चन्दनबालाका क्रोध मेरे ही ऊपर उतारने लगेगी।"

दासीकी यह भेद-भरी बातें सुन, सेठने उसे बहुत-बहुत धन्यवाद दिये और उसीके बतलाये हुए तहख़ानेके दरवाज़े पर पहुँच, उसका ताला तोड़, उसके भीतर प्रवेश किया। तहख़ानेमें चारों ओर अन्धकार फैला हुआ था—हाथको हाथ नहीं सूझता था; फिर चन्दनबाला कैसे नज़र आती ? उसे न देखकर सेठने बड़े ऊँचे स्वरमें उसे पुकारा ; पर जब उसका भी उत्तर न मिला, तब उसने घबराकर कहा,—"प्यारी पुत्री ! तू मेरी बातका उत्तर क्यों नहीं देती ? क्या तुझे मेरा विश्वास नहीं है ?" इस बार भी कोई कुछ न बोला। तब लाचार सेठने एक दीपक जलाया और उसीके प्रकाशमें देखा, कि चन्दनबाला नेत्र मूँदे, आँखोंसे आँसू

बरसाती हुई वीतराग प्रभुके ध्यानमें मग्न हो रही है। उसका मुख-रूपी कमल सूख गया है। खानेकी बात तो दूर रही, बिना एक घूँट जल पिये ही उसने तीन दिन बिता दिये थे, इस लिये उसका शरीर अशक्त हो गया था। इतने पर भी उसके हृदयकी पवित्र भावनाको तनिक भी ठेस नहीं पहुँची थी। इस विपत्ति-रूपी कसौटी पर कसे जानेके कारण उसका आन्तरिक तेज स्मान पर चढ़ाये हुए हीरेकी तरह चमक रहा था। चन्दनबालाकी यह अवस्था देखकर सेठको बड़ा ही दुःख हुआ। उसके पैरोंमें बेड़ी पड़ी हुई थी, इस लिये सेठ उसे गोदमें उठाकर बाहर ले आया।

इसी समय मूलाको इस बातका पता चल गया, कि उसकी क़लई खुल गयी और सेठ चन्दनबालाका उद्धार कर उसे लिये आता है। यह बात मालूम होतेही उसके सारे शरीरमें चिन-गारियाँसी लग गयीं। उसने तुरत रसोई घरमें ताला लगा दिया और घरसे बाहर हो गयी।

सेठ चन्दनबालाको लिये हुए अपने घरके दरवाज़े पर पहुँचा और उसे वहीं बैठाकर आप रसोई घरसे उसके लिये कुछ खाने-को लाने चला। वहाँ पहुँचकर उसने देखा, कि उसमें ताला जड़ा हुआ है। यह देखकर वह बहुत घबरा उठा। अबके उसे अपनी पत्नी मूलाकी दुष्टताकी बात पूरी तरह समझमे आ गयी। उसने मन-ही-मन अपनी पत्नीकी दुष्टता और निर्दयताको बार-बार धिक्कार दिया। स्त्रियाँ कहाँ तक अधम हो सकती हैं, यह बात उसे अच्छी तरह मालूम हो गयी।

एक ओर चन्दनबालाको भूख-प्याससे वेहोश और दूसरी ओर रसोईघरके दरवाज़े पर ताला जड़ा हुआ देखकर सेठको बड़ी चिन्ता हुई। क्षण-भरके लिये वह विचार-शून्य हो गया। अन्तमें उसने सोचा,—"यदि थोड़ी देरके भीतर इस वेचारीको खाना नहीं मिलेगा, तो यह अयश्यही मर जायेगी। अब मैं क्या करूँ?"

सोचते-सोचते उसने एक बुढ़िया दासीको देखकर कहा,—"दासी! चाहे जैसे हो, तू कहींसे कुछ खानेको ले आ। देख, विना अन्नके यह विचारी निर्दोष बाला पानी बिना मछली की तरह तड़प रही है।"

उस समय दासीके पास और तो कुछ खानेको नहीं था, सिर्फ़ थोड़ीसी उड़दकी दाल कहींसे खोजते-ढूँढ़ते मिल गयी। उसे ही लिये हुई वह सेठके पास आयी। उसे देखकर सेठको कुछ धैर्य हुआ। उसने दालको सूपमें रखकर चन्दनबालाके सामने रख दिया और आप उसके पैरोंकी बेड़ी तुड़वानेके लिये एक लुहारको बुलानेके लिये चला गया। उस समय सेठके घरमें चन्दनबालाके सिवा और कोई न रह गया!

अहा! कर्मके प्रभावके आगे मनुष्यकी मति कुछ भीं काम नहीं करती! अब देखिये, पाठक! कैसा कर्म-धर्म संयोग आ पहुँचता है और सती चन्दनबालाके दुःख क्योंकर दूर हो जाते हैं!

आठवाँ परिच्छेद
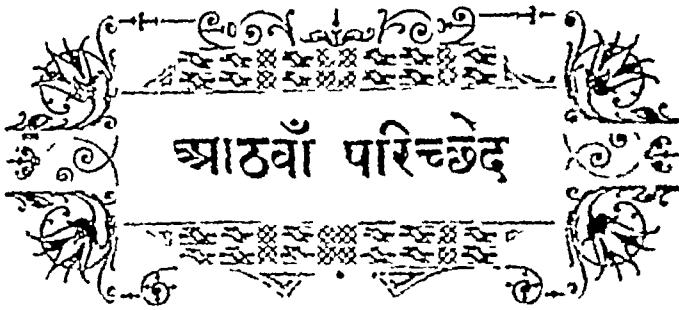
प्रभुकी प्रतिज्ञाकी पूर्त्ति और सतीत्वका प्रभाव।

अट्ठम-तपके* पारणाके लिये उड़दके बाकुले सामने आये देख कर पवित्र हृदया चन्दनबालाने अपनेमनमें विचार किया,—"आज मुझे अट्ठम-तपका पारणा करना है। यदि आज मेरे पूर्व-जन्मके पुण्योंका प्रभाव प्रकट हो और मुझे इस तपका पूरा-पूरा फल मिलनेवाला हो, तो अवश्यही कोई पवित्र और सत्पात्र अतिथि यहाँ आ जावेगा। तब उन्हें आहार देकर ही मैं पारणा करूँगी।"

सती श्राविकाओंका प्रभाव बड़ा ही विचित्र होता है। उनके मनमें जो कुछ पवित्र विचार उत्पन्न होता है, वह पूरा हुए बिना नहीं रहता। उनके प्रबल पुण्यके परमाणु किसी-न-किसी तरह ऐसा सयोग उपस्थित कर ही देते हैं, जिससे उनकी मनोरथ-सिद्धि अवश्यही हो जाती है। सती चन्दनबाला अतिथिकी बाट जोहती हुई बैठी ही थी, कि इसी समय अपनी कठिन प्रतिज्ञा

---

* एक साथ तीन दिनका उपवास करना अट्ठम-तप कहलाता है।
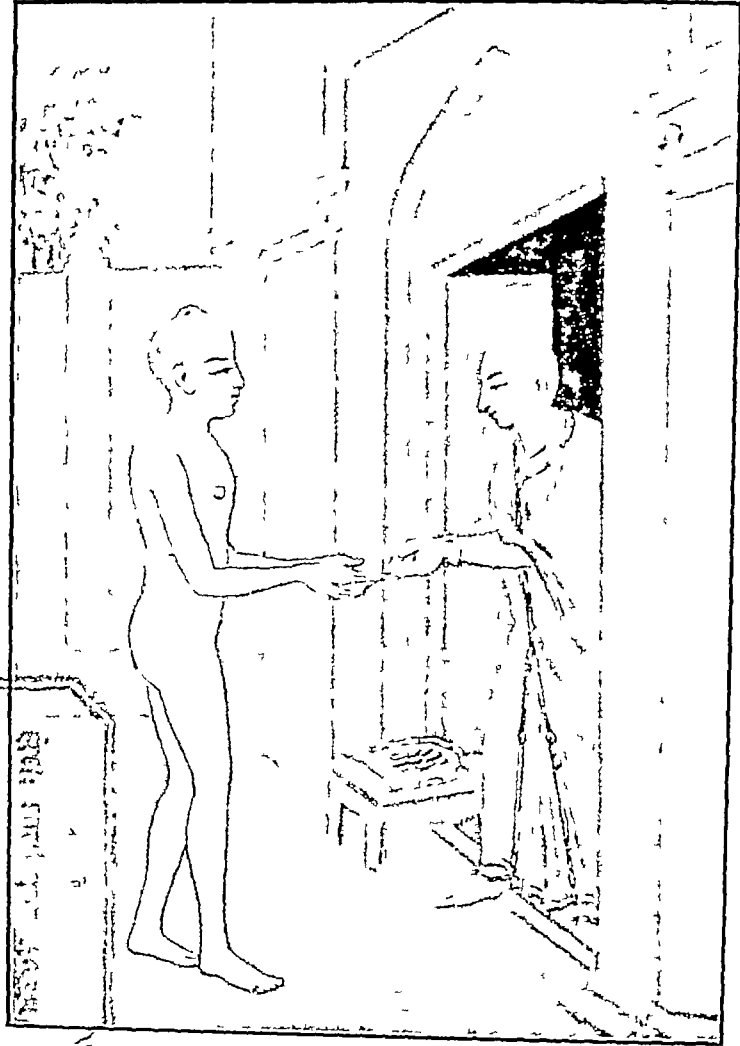
अब तो अपनी कठिन प्रतिज्ञाकी कुल बातें पूरी हुई देख कर तीर्थंकर महावीरस्वामीने सतीका दिया हुआ वह शुद्ध आहार बड़ी प्रसन्नतासे ग्रहण किया।

Narsingh Press, Calcutta

पूरी होती न देख, द्वार-द्वारपर भिक्षाके लिये घूमते हुए भगवान् महावीर स्वामी वहाँ आ पहुँचे। उन महायोगी वर्द्धमान स्वामीको देखकर सती चन्दनबालाके मनमें अत्यन्त आनन्द हुआ और वह उसी समय हर्षकी उमङ्गमें आकर उठ खड़ी हुई तथा धर्मवीर भगवान्से कहने लगी,--

"हे त्रिलोक-वन्दनीय विभो! हे कल्याणकारी स्वामी! हे करुणाके समुद्र! हे भाव-शत्रुको जीतने वाले वीतराग! तुम्हारी जय हो! हे त्रिविध तापको दूर करने वाले और अखण्ड शान्ति प्रदान करनेवाले शान्ति-रसके सरोवर! हे भव-चिन्ताको मिटाने-वाले ज्ञान-सिन्धो! तुम निरन्तर अपने चरण-कमलसे इस पृथ्वी को पवित्र करते रहो! हे जङ्गम कल्पवृक्ष! हे प्रभो! मुझपर प्रसन्न होकर, इस शुद्ध आहारको ग्रहण कर, मुझे अप्रतिम पुण्य-वती बनाओ नाथ! इस दीन बालाको कृतार्थ करो।"

सती चन्दनबालाकी यह प्रार्थना सुन, अपनी प्रतिज्ञामें उन्होंने सिर्फ़ यही कसर देखी, कि वह बाला रोती नहीं है, इसी लिये वे लौटे जा रहे थे। यह देख, चन्दनबालाकी आँखों भर आयीं और वह बड़े भाग्यसे घर आये हुए अतिथिको यों लौट जाते देख, पुक्का फाड़कर रोने लगी। उसी समय प्रभुने पीछे फिर कर देखा, कि वह श्राविका, तो ढाढ़े मार-मार कर रो रही है। अब तो अपनी कठिन प्रतिज्ञाकी कुल बातें पूरी हुई देखकर तीर्थङ्कर स्वामीने सतीका दिया हुआ वह शुद्ध आहार बड़ी प्रसन्नतासे ग्रहण कर लिया! भगवान्का कठिन प्रण पूरा होते देख और

सती चन्दनबालाकी अपूर्व दृढ़ता तथा भावनासे प्रसन्न होकर देवताओंने उसी समय वहाँपर आकाशसे बारह करोड़ सुवर्ण-मुद्राओंकी वृष्टि की। उस समय सतीकेपुण्योंके प्रभावसे उसके पैरोंमें पड़ी हुई लोहेकी बेड़ी सोनेका गहना बन गया, उसके सिरपर नये केश निकल आये और आकाशमें "अहोदान ! अहोदान !" की जयध्वनि तथा दुन्दुभि का नाद होने लगा। देवताओंने तत्क्षण पाँच दिव्य प्रकट किये और संसारको सत्पात्र दान देने की महिमा बतला दी।

इसी समय कौशाम्बी नगरीके कोने-कोनेमें इस चमत्कारिक घटनाका समाचार फैल गया। राजा शतानिक स्वयं वहाँ आ पहुचे और देवताओंके बरसाये हुए सोनेके ढेरको लेने लगे। इसी समय देवताओने उन्हें वह द्रव्य लेनेसे रोका और कहा, कि इस सारी सम्पत्तिकी स्वामिनी चन्दनबाला है। उन्होंने सबको सुनाकर यह भी कहा, कि चन्दनबाला जब वीर प्रभुकी प्रथम साध्वी होगी, तब वह यह द्रव्य दान करनेके काममें लायेगी।"

धर्मवीर महावीर को पारणा कराती हुई चन्दनबाला अपने स्त्री जन्मको सफल मानने लगी। उसने अपनेको परम भाग्यवती समझा। इसके सिवा सुपात्रदानके प्रभावसे देवताओं द्वारा प्रकट किये हुये पञ्चदिव्योंको देख, धर्मकी महिमा समझकर उसके मनमें और भी आनन्द हुआ।

इसी समय लुहारको साथ लिये हुए सेठ धनवाह घबराया हुआ वहाँ आ पहुँचा। अपने घरके पास राजा शतनीक और

चन्दनबाला

इस समय सतीके पुण्योंके प्रभावसे उसके पैरोंमें पड़ी हुई लोह की बेड़ी सोनेका गहना बन गया, उसके सिर पर नये केश निकल आये और आकाशमें "अहोदान! अहोदान!" की जयध्वनि तथा दुन्दुभि का नाद होने लगा।

पृष्ठ ४६]

अन्य कितने ही माननीय पुरुषोंको इकट्ठे देखकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने लोगोंसे पूछकर मालूम कर लिया, कि चन्दन-बालाके भगवान्‌को दान देनेके प्रभावसे बारह करोड़ सुवर्ण-मुद्राएँ देवताओंने बरसायी है, इसी लिये यहाँ इतनी भारी भीड़ लग रही है। यह सुन, और चन्दनबालाके पैरोंमें बेड़ीके स्थानमें गहना तथा सिरमें नये-नये केश देखकर उसे बड़ा ही हर्ष हुआ। धर्मका ऐसा साक्षात् प्रभाव देख, उसके रोंगटे खड़े हो गये।

उस समय राजा शतानीक, सेठ धनवाह तथा नगरके अन्यान्य गण्यमान्य पुरुषोंसे सती चन्दनबालाने कहा,—"जगत्-पति श्रीवीर प्रभुको पारणा करनेसे मुझे जो महा लाभ मिला है, उसमें मेरे पूर्व-पुण्योंके सिवा औरोंका भी मेरे ऊपर बड़ा भारी उपकार है। सबसे पहले मैं मूला-देवीका बहुत बड़ा अहसान मानती हूँ। जो काम मेरी माता धारिणीसे भी नहीं बन पड़ा, वही इन्होंने कर दिखलाया। हे राजन्! इस मामलेमें आपका और आपके सेनापतिका भी बहुत बड़ा प्रसाद मेरे ऊपर हुआ है। क्योंकि यदि सेनापति मुझे किसी वेश्याके हाथ बेंच देता, तो मुझे यह अपूर्व लाभ कैसे मिलता? और सेठजी! तुम मेरे पिताके तुल्य हो। तुमने मुझे अपनी सन्तानसे भी बढ़कर माना और प्यार किया है। इतना ही नहीं, बल्कि धर्म-कार्यमें भी तुमने जो मेरी बहुमूल्य सहायता की है, उसका मैं वर्णन नहीं कर सकती। तुम्हारी ही कृपासे मेरे सारे पाप दूर हो गये हैं। आपके घर रहने और आपकेसे दृढ़धर्मी श्रावकके सहवाससे मेरी

धर्म-भावना दिन-दिन बढ़ती हुई अधिकाधिक सतेज होती चली गयी। आपके इस महत् उपकारका बदला मैं किसी तरह आपको नहीं दे सकती, मेरे पूर्वजन्मोंके बहुतेरे पुण्य अबतक सञ्चित थे, तो भी मुझे आपके समान धर्मात्माका सहवास प्राप्त हुआ।"

इस प्रकार चन्दनबालाकी— विनयपूर्वक बातें सुन, धनवाह सेठने कहा,—"मेरी गुणवती पुत्री! तेरी इस गुणमयी दृष्टिकी बलिहारी है। एक श्रावक-सुताकी रक्षा करना मेरा धर्म था, इस लिये मैंने अपने कर्त्तव्यसे अधिक कुछ भी नहीं किया। मैं तो किस खेतकी मूली हूँ? तेरे गुणोंसे खिँचकर देवता भी यहाँतक चले आये और तुम्हारे दास हो रहें हैं। श्रावक-बाले! तेरी धर्म-श्रद्धा अपूर्व है और उसीके बलसे तेरी सब प्रकारसे भलाई हो रही है। जो श्रावक-बाला अपनी धर्मश्रद्धाको दृढ़ नहीं रखती, वह केवल नामकी ही श्राविका है। वह कदापि अपने जीवनको सार्थक नहीं कर सकती। उसके साथ रहकर दूसरी श्राविकाएँ भी उससे किसी तरहका लाभ नहीं उठा सकतीं। जो चतुरा श्रावक-सुता अपने जीवनको धर्ममय बनाती है, वह दोनों कुलों-का अलङ्कार होकर रहती है और बहुतेरी श्रावक-बालाओंको धर्ममें प्रवृत कर देती है। वह अपने परिवारको धर्मका एक नमूना बना देती है। बेटी! सचमुच तुझसी श्रावक-बालाएँ धन्य और कृत्यपुण्य हैं, जो धर्मकी महिमाकी वृद्धि करती हुई अपने जीवनको धर्मका एक दृष्टान्त-स्वरूप बना देती हैं।"

चन्दनबाला, चुपचाप सिर झुकाये, धनवाहसेठके इन प्रशंसा पूर्ण वचनोंको सुनती रही।

सती चन्दनबालाने अपने पिताकी राजधानी चम्पा पुरीमें ही रहकर भली भाँति धार्मिक शिक्षा प्राप्त की थी। बचपनके दृढ़ संस्कारके बिना सङ्कटकी कसौटी पर कसे जाने पर हृदयका धैर्य स्थिर नहीं कर सकता। धार्मिक शिक्षाके प्रतापसे ही उस श्रावक बालामें दृढ़ता, धैये, सहनशीलता, भक्ति, उदारता और पवित्रता आदि अच्छे-अच्छे गुण-पूर्ण मात्रामें प्रकट हुए थे। वह सदा सब वस्तुओंमें भलाई ही देखा करती थी। इसी गुणदृष्टिके कारण वह अपनी बुराई करनेवालोंको भी भलाई करने वालाही जानती थी, यही भाव हृदयमें भरा हुआ होनेके कारण वह सेनापति और सेठानीका भी उपकार ही मानती थी, यद्यपि इन दोनोंने उसकी सबसे अधिक बुराई की थी। गुणदृष्टिसे विचार करनेवाला तो सचमुच यही कहेगा; कि यद्यपि इन दोनोंने उसकी बुराई ही की, तथापि अन्तमें इसी बुराईके भीतरसे बड़ी भारी भलाई पैदा हुई। वास्तवमें, चन्दनबालाका ऐसा विशाल और मन इतना उदार था; कि वह अपने अपकार करनेवालोंको भी ईर्षा-द्वेषकी दृष्टिसे नहीं देखती थी।

अन्तमें परम सती चन्दनबालाने धनवाह सेठसे बड़ी विनयके साथ कहा,—"पूज्य धर्म-पिता! मेरी माता मूलादेवीको तुम कदापि कुछ अप्रिय बात न कहना। उस बेचारीने मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ा,—उलटा मेरा परम उपकारही किया है। सज्जन

गण सदैव अपकारके बदले अपने शत्रुका उपकार किया करते हैं। मूलादेवीके प्रति मेरे मनमें तनिक भी ईर्ष्या या द्वेषका भाव नहीं है। इसलिये तुम कृपाकर माता मुलादेवीको मेरे ऊपर किये गये अत्याचारोंकी याद दिलाकर लज्जित मत करना, नहीं तो बेचारीको बड़ा दु:ख होगा।"

वीर भगवानने पाँच दिन कम छ, महीने तक सती चन्दन-बालाके हाथसे पारणा ग्रहण किया और तदनन्तर अन्यत्र विहार कर गये। उसके बाद भी वह कितनेही दिनों तक सेठ धन-वाहके घर रही। मूलादेवीको माताके समान मानती हुई वह उसके साथ बड़े आनन्द-पूर्वक रहती थी। सती चन्दनबालाका उत्तम स्वभाव देख, अपनी करनीको याद करके वह कितनी ही बार बड़ी लज्जित हो जाती थी, पर चन्दनबाला उसे धैर्य देती हुई प्रसन्न कर देती थी। इस प्रकार जब मूलाको सतीका पूर्णरूपसे परिचय प्राप्त हुआ तब उसने उससे सच्चे दिलसे क्षमा माँग ली और स्वयं शुद्ध श्राविका होकर रहने लगी।

पारस मणिके स्पर्शसे लोहा भी सोना बन जाता है। चन्दन के सहवाससे साधारण लकड़ी भी सुगन्धित हो जाती है। उसी प्रकार सन्तोंके समागमसे साधारण और अधम मनुष्य भी सन्त बन जाते हैं। अहा! धन्य है, सत्संगकी महिमा! सन्त-समा-गमकी जितनी ही बड़ाई की जाय वह कम ही है।

—:*:—

नवाँ परिच्छेद

सतीको केवल-ज्ञानकी प्राप्ति।

एक दिन सती चन्दनबालाको श्रीमहावीर स्वामीके केवल-ज्ञान उत्पन्न होनेका समाचार सुनायी दिया। सुन कर उसे बड़ा आनन्द हुआ। वह धनवाह सेठ और सेठानी मूलादेवीकी आज्ञा लेकर भगवान्‌की वन्दना करने गयी और वहाँ पहुँच, भगवान्‌की वन्दना कर, धर्म-देशना सुनने के लिये श्राविकाओंकी सभामें बैठ गई।

वर्धमान स्वामीने धर्म देशना सुनाते हुए कहा,—"हे भव्य आत्माओ! इस भवसागरमें भ्रमण करते हुए द्वीपके समान नर-देह पाना बड़ाही दुर्लभ है। नरदेह लाभ करने पर भी उसका मूल्य समझाने वाला सद्गुरुका मिलना और भी कठिन तथा दुर्लभ है। मानव-जन्मको सफल करनेके लिये चारित्र-रत्नकी बड़ी भारी आवश्यकता है। यह चारित्र दो प्रकारका होता है—पहला, देशचारित्र और दूसरा, सर्व-चारित्र। देश-चारित्रकी

अपेक्षा सर्व-चरित्र शीघ्र मोक्ष देनेवाला होता है। इस लिये शीघ्र ही इस भवसागरसे पार उतरनेके निमित्त संयम-रूपी नौकाका आश्रय ग्रहण करना चाहिये। यह संयम यदि अतिचार-रूपी छिद्रोंसे रहित हो, तो भव्यात्माएँ शीघ्र ही अपने इष्ट स्थानपर पहुँच जाती हैं। इसलिये हे भव्य जीवों! तुम लोग इसी संयम-का सेवन करो, जिससे तुम शीघ्र ही शिवपुरका (मङ्गल-नगरी-का) सुख प्राप्त कर सको।"

भगवान्‌के मुँहसे यह धर्मदेशना श्रवण कर, सती चन्दनबाला प्रभुके सम्मुख हाथ जोड़े हुए कहा,—"हे भगवन्! इस भवसा-गरका दुःख बड़ा ही विकट है। आप मुझे संयम-रूपिणी नौका देकर इस सङ्कटसे मेरी रक्षा किजिये।"

चन्दन बालाकी यह प्रार्थना सुनकर भगवान् ने सोचा,—"यह सती संयम ग्रहण करनेके लिये सर्वथा समर्थ है।" यही सोच कर प्रभुने उसे चरित्र प्रदान करना स्वीकार कर लिया। तब चन्दनबाला चटपट कौशाम्बी-नगरीमें चली आयी और वहाँ पहुँच देवताओंकी दी हुई साढ़े बारह करोड़ सुवर्ण-मुद्राओंको सात क्षेत्रोंमें व्यय कर, धर्म-पिता सेठ धनावह और मूलादेवीकी आज्ञा ले, फिर भगवान् के पास आ पहुँची। प्रभुने उसे सानन्द दीक्षा दी। सती चन्दनबाला के संयमका समाचार सुन, राजा शता-नीककी पत्नी रानी मृगावती भी राजाकी अनुमति ले, बड़ी धूम-धामके साथ भगवान्‌के पास आयी और उसने भी भगवान् से संयम ग्रहण किया।

एक दिन भगवान् श्रीमहावीर जिनेश्वर कौशाम्बी-नगरीमें पधारे। उस दिन उनके साथ-साथ चन्दनबाला और मृगावती भी थीं। अनेक देवता, साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविकाएँ वीतराग प्रभुके मुखसे धर्म श्रवण करनेके निमित्त वहाँ आ पहुँचीं। धर्मवीर महावीरने उत्तम प्रकारसे धर्मोपदेश प्रदान किया। जिस समय उनका उपदेश समाप्त होनेको आया, उसी समय सूर्य और चन्द्रमा अपने मूल विमानों पर चढ़े हुए प्रभुकी वन्दना करने आये। उन्हें देख, साध्वी चन्दनबालाने सोचा, कि सन्ध्याका समय हो गया। यही सोच कर वह वहाँ से उठी और नगरमें अपने स्थान पर चली आयी, पर समयका कुछ ज्ञान न होनेके कारण मृगावती वहीं बैठी रही। इसके बाद जब सूर्य और चन्द्रमा अपने-अपने स्थानको चले गये, तब चारों ओर अंधेरा छा गया। यह देख, साध्वी मृगावती झटपट अपने उपाश्रयमें चली आयी। समय व्यतीत होनेपर उसे आते देख, चन्दनबालाने उसे शिक्षा देते हुए कहा,—"हे महानुभावे! तुम कुलीन हो तुम्हें रातको बाहर नहीं रहना चाहिये। ऐसा करनेसे लोक-व्यवहार की मर्यादा नष्ट होती है और लोकमें संयम-धर्मकी अवहेलना होती है।"

इस प्रकार उसे शिक्षा दे कर, चन्दनबाला शय्या बिछा-कर सो रही। उसके सो जाने पर मन-ही-मन पछताती हुई मृगावती उसके चरण दाबने लगी। अपने किये हुए अतिचारके लिये मन-ही-मन सन्तापका अनुभव करती हुई वह अपनेको बार-बार धिक्कार देती और जी-ही-जीमें यह सङ्कल्प करती थी, कि अबसे

ऐसा कभी न करूँगी। यही बात बार-बार कहती हुई वह अपने को बार-बार धिक्कार देती हुई और सोयी हुई चन्दनबालासे क्षमा माँगने लगी ; पर उसकी ओरसे कुछ भी उत्तर उसे नहीं मिला। अपने अतिचारके लिये इस प्रकार पश्चात्ताप करती हुई मृगावती उत्तरोत्तर ऊँची भावनामें प्रवृत्त होती गयी। इस तरहकी ऊँची भावनाओंमें प्रवृत्त होनेके कारण मृगावतीको शीघ्र ही केवल-ज्ञान उत्पन्न हो गया। इस ज्ञानके उदय होनेसे साध्वी मृगावतीको ज्ञानदृष्टिसे समस्त विश्व हस्तामलककी भाँति साक्षात् दिखाई देने लगा। उसी समय उसने अन्धकारमें रेंगते हुए काले साँपको अपनी ज्ञान-दृष्टिसे देखकर, सोयी हुई चन्दनबाला का हाथ हटा कर एक ओर कर दिया, जिससे वह साँप चुप चाप सरसराता हुआ चला गया। इतनेमें चन्दनबालाकी नींद टूट गयी और उसने आँखें मलते हुए कहा,—"देवी ! तुमने इस प्रकार मेरा हाथ क्यों हटाया ?" इसके उत्तरमें केवल ज्ञानी मृगावतीने कहा,—"महासतीजी ! तुम्हारे हाथके पास एक काला साँप चला जा-रहा था , इसी लिये मैंने तुम्हारा हाथ हटाकर एक किनारे कर दिया।" यह सुन, साध्वी चन्दनबालाको बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने विस्मित होकर पूछा, —"भद्रे ! इस घनी अँधियारीमें, जब कि अपना हाथ पसारे भी नहीं सूझता, तुमने उस साँपको कैसे देख लिया ?" इसके उत्तरमें साध्वी मृगावतीने कहा —" मैंने ज्ञान दृष्टिसे उसे देख लिया था।"

यह सुन, चन्दनबालाने आनन्द मिले हुए आश्चर्यके साथ पूछा—

उसी समय उसने अन्धकारमें रेंगते हुए काले साँपको अपनी ज्ञान-दृष्टिसे देखकर, सोयी हुई चन्दनबाला का हाथ हटाकर एक ओर कर दिया, जिससे वह साँप चुपचाप सरसराता हुआ चला गया।

Narsingh Press, Calcutta

[पृष्ठ ५४]

"महानुभावा! ज्ञान प्रतिपाति है ; अथवा अप्रतिपाति ?" मृगावतीने मन्द स्वरसे कहा,—"अप्रतिपाति।" यह सुन, चन्दनबालाने कहा,—"ऐं! यह तो केवल ज्ञान कहलाता है, तो क्या तुम्हें केवलज्ञान उत्पन्न हो गया ?" यह सुन साध्वी मृगावतीने कहा,—"यह सब आपकी कृपा है।"

यह सुनते ही सती-साध्वी चन्दनबाला तुरत ही शय्या परसे उठ बैठी। केवली साध्वी मृगावतीकी ही भाँति हृदयमें निर्मल भावना करती, उत्तरोत्तर शुक्ल-ध्यानकी सीढ़ी पर चढ़ती हुई महासती चन्दनबालाको भी केवल-ज्ञान उत्पन्न हुआ। उस समय वे दोनों साध्वियाँ केवल-ज्ञानके अपूर्व आनन्दका अनुभव करने लगीं। जो ज्ञान लाखों-करोड़ों वर्षतक तपस्या करने पर भी कठिनतासे प्राप्त होता है और करोड़ों वर्षतक संयमका सेवन करने पर भी जिसकी प्राप्ति दुर्लभ समझी जाती है, उस ज्ञानको साध्वी मृगावती और महासती चन्दनबालाने निर्मल भावनाके बलसे क्षण-भरमें प्राप्ति कर लिया। धन्य हैं, वे महासतियाँ, जिन्होंने पूर्वकी प्रीति को मुक्ति मन्दिर—पर्यन्त स्थिर रखा।

महासती चन्दनबाला महावीर भगभान् की मुख्य साध्वी हुई। बाल्यावस्थासे ही आर्हत-धर्मकी दिव्य प्रभा उसके हृदयमें प्रकाश कर रही थी। श्रावक-धर्मकी आराधना करते हुए वह कसौटी पर भी खरी उतरी। उसने अपनी निर्मल 'धर्मवृत्ति को निरन्तर सतेज रखा। अन्तमें मृगावती और चन्दनबाला, ये दोनों ही साध्वियाँ इस पवित्र भारत-भूमि पर अपने नामकी

अमिट छाप लगा कर, चिरकालके लिये अपना यश स्थापित कर अनन्त-आनन्द-युक्त मुक्ति-मन्दिरको प्राप्त हुई ।

इस प्रकार परम सती चन्दनवालाका चरित्र, भारत-वर्षकी जैन प्रजामें परम प्राख्यात है। उसका पवित्र नाम प्रातः काल श्रावकोंके घर-घरमें उच्चारण किया जाता है। आजतक जैन-प्रजा प्रतिदिन आवश्यक कार्योंके साथ-साथ उस सती-शिरोमणिके पावन-नामका स्मरण किया करती है। वड़ी वड़ी सतीयोंके मङ्गलमय नामोंकी श्रेणीमें इस सती-साध्वीका नाम वहुत ही प्रसिद्ध है।

इस सतीके चमत्कारी चरित्रसे यह भली भाँति मालूम हो जाता है, कि उसमें शील-व्रतकी रक्षाके निमित्त कितनी दृढ़ता भरी हुई थी। सेनापति और मूलाने उसे कितने सङ्कटोंमें डाला पर वह अपने पवित्र धर्मसे तनिक भी विचलित नहीं हुई। दुराचारी सेनापतिने उसे वाज़ारमें ले जाकर एक वेश्याके हाथ वेच लिया, तो भी वह उसके घर नहीं गयी। इससे उसका धर्म पर अटल अनुराग प्रमाणित होता है। उसकी इसी दृढ़तासे प्रसन्न होकर देवताओंने उस वेश्याकी नाक काट ली और सतीके शीलकी रक्षा की। इस जैन-सतीके चमत्कारिक चरित्रके पढ़ने-सुननेसे श्रावक वालाओंको अनेक प्रकारकी शिक्षाएँ मिलती हैं। वालकपनमें, पिताके घर, उसे जो उत्तम शिक्षा मिली थी, उसका अनुकरण प्रत्येक जैन-वालिकाको करना चाहिये। दुःख आ पड़ने पर भी उसने धैर्यको नहीं खोया और अपनी बुराई

करने वालोंको भी भलाई करनेवाला ही समझ कर उनपर ईर्षा या द्वेषका भाव नहीं रखा, यह भी उसके चरित्र की एक बड़ी भारी विशेषता है।

इस चरित्रसे यह बड़ी भारी शिक्षा मिलती है, कि ऊँची शिक्षाके संस्कारसे स्त्रियाँ अपने जीवनको कहाँ तक उन्नत बना सकती हैं। शिक्षा—रूपिणी कल्पलताके सेवनसे श्राविकाएं अपने जीवन को आदर्श बना कर घर-भरके लिये एक उत्तम शिक्षकके समान बन जाती हैं।

श्रावक—बालाओ! तुम भी इस सती—शिरोमणिके जीवनसे उत्तम शिक्षा ग्रहण कर अपने, स्त्री—जीवन को उन्नत्त बनाओ और श्रावक-कुलको प्राकशित करती हुई जिन-शासनके प्रभावको सारी पृथ्वी पर फैला दो।
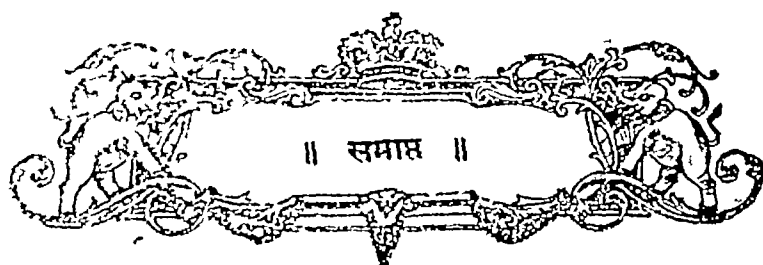
शान्तिके समय मनोरञ्जन करने योग्य

उत्तम पुस्तकें

सचित्र आदिनाथ-चरित्र

इस पुस्तकमें जैनोंके पहले तीर्थङ्कर भगवान आदिनाथ स्वामीका सम्पूर्ण जीवन-चरित्र दिया गया है, इसको साद्यन्त पढ़ जानेसे जैनधर्मका पूर्ण तत्त्व मालूम हो जाता है, भाषा भी ऐसी सरल शैलीसे लिखी गई है, कि साधारण हिन्दी जानने वालक भी बड़ी आसानीके साथ पढ़ सकता है, सचित्र होनेके कारण पुस्तक खिल उठी है, जैन समाज में आजतक ऐसी अनोखी पुस्तक कहीं नहीं प्रकाशित हुई, अगर आप ऋषभदेव भगवानका सम्पूर्ण चरित्र पढ़नेकी इच्छा रखते हैं। अगर आप जैन धर्मके प्राचीन रीति रिवाजों को जानना चाहते हैं, अगर आप अपने को उपदेशक बनाकर समाज का भला करना चाहते हैं, अगर आपकी सन्तान को जैन धर्मकी शिक्षा प्रदान करना करना चाहते हैं, अगर आप लोक पर लोक साधन करना चाहते हैं, अगर आप धर्म क्रियाके समय शान्तिका आश्रय लेना चाहते हैं, तो इस पुस्तक को मंगवाने के लिये आज ही आर्डर दीजिये। मूल्य सजिल्दका ५) अजिल्द का ४) डाकखर्च पृथक्।

अध्यात्म अनुभव योग प्रकाश

इस पुस्तकमें योग सम्बन्धी सर्वविषयोंकी व्यक्तता की गई है, योगके विषयको समझानेवाली, हिन्दी साहित्यमें आज तक ऐसी सरल हिन्दी पुस्तक कहीं नहीं प्रकाशित हुई। इस पुस्तकमें, हठयोग तथा राजयोगका साङ्गोपाङ्ग वर्णन, चित्तको स्थिर करने आदिके उपाय ऐसी सरल शैलीसे लिखे गये हैं, जिन्हे सामान्य बुद्धिवाला बालक भी बड़ी आसानीके साथ समझ सकता है, इस ग्रन्थ-रत्नके कर्त्ता एक प्रखर विद्वान् जैनाचार्य हैं, जिन्होने निष्पक्षपात दृष्टिसे प्रत्येक विषयोंको खूब अच्छी तरह खोल-खोल कर समझा दिया है। पाठकोंसे हमारी विनीत प्रार्थना है, कि एक बार हमारी बातपर विश्वास कर एक प्रति अवश्य मंगवावें। अगर आपको हमारी बातपर प्रतीति हो जाय तो फिर अपने इष्ट मित्रोंसे भी मँगवानेके लिये प्रेरणा करें। मूल्य अजिल्द ३॥) सजिल्द ४॥)

सचित्र नल-दमयन्ती

इस पुस्तकमें नल और दमयन्तीकी जीवनी मय चित्रोंके दी गई है, अधिकांश तो इस पुस्तक में पतिव्रता-धर्म-सूचक ज्ञानका भण्डार भर दिया गया है, इसको पढ़कर स्त्रियोंको अपने आपेका ख्याल हो जाता है। इस पुस्तकको प्रत्येक बाल, युवा और वृद्ध नारियोंको अवश्य देखना चाहिये, नल-दमयन्तीकी जीवनियाँ अनेकानेक प्रकाशित हो चुकी हैं; पर आज तक संसारमें जैना-

चार्यकी कलमसे लिखी हुई पुस्तक कहीं नहीं प्रकाशित हुई, अतएव पाठक और पाठिकाओंसे हमारा सानुरोध निवेदन है, कि एकबार इस पुस्तकको मँगवाकर अवश्य देखें। मूल्य ।।।) डाकखर्च अलग।

सचित्र सुदर्शन-चरित्र

इस पुस्तक में सुदर्शन शेठ का चरित्र दिया गयहै, जैन समाज में ऐसा कोई पुरुष न होगा कि जिसने सुदर्शन शेठका जीवन न सुना हो। ब्रह्मचर्यव्रत पर सुदर्शन शेठकी कथा सुप्रसिद्ध है, शील को बचानेके कारण सुदर्शन शेठ को असह्य विपत्ति का सामना करना पड़ा। पूर्व के महापुरुषों ने शील की रक्षा के लिये प्राणत्याग करना स्वीकार किया, पर शीलको त्यागना नहीं स्वीकार किया इसी विषय पर सुदर्शन शेठके जिवनमें अनेकानेक घटनायें हो गई हैं, जिनके पढ़नेसे प्रत्येक नर नारी को अपने शीलके विषय में खयाल हो आता है, अगर आप अपनी समाज में लोगों को कुसंग से बचाना चाहते हैं, अगर आप अपनी समाज में शील का महत्त्व बतलाना चाहते हैं, अगर आप अपने बालकों को ब्रह्मचर्य व्रतमें स्थिर रखना चाहते हैं तो इस पुस्तकको अवश्य मंगवाईये। मूल्य ।।=) डाक खर्च अलग।

पुस्तके मिलनेका पता:—

पंडित काशीनाथ जैन,

नरसिंह प्रेस, २०१, हरिसन रोड, कलकत्ता